PDF Compressor Free Version

श्री राम उवाच -9

गंगा लौट हिमालय आए

आचार्य-प्रवर श्री रामलालजी म.सा.

प्रकाशक :

श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ

समता भवन, बीकानेर 334005 (राज.)

PDF Compressor Free Version

श्री राम उवाच - 9

गंगा लौट हिमालय आए

प्रवचनकार :
आचार्य-प्रवर श्री रामलालजी म.सा.

प्रथम संस्करण : फरवरी 2008
द्वितीय संस्करण : सितम्बर 2009, 1100 प्रतियाँ

_yë` : 35/-

अर्थ सहयोगी :
श्री अनिलजी मनोजजी नवीनजी देशलहरा, दुर्ग (छ.ग.)

प्रकाशक :
श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ
समता भवन, रामपुरिया मार्ग, बीकानेर-334005 (राज.)
फोन : 0151-2544867, 3292177
फैक्स : 0151-2203150

मुद्रक :
तिलोक प्रिंटिंग प्रेस
मोहता अस्पताल के पास, बीकानेर
मो. : 9314962475

PDF Compressor Free Version

प्रकाशकीय

शास्त्रज्ञ, तरूण तपस्वी, प्रशांतमना आचार्य प्रवर 1008 श्री रामलालजी म.सा. हुक्मगच्छ के नवम् नक्षत्र है आपश्री संयम के प्रति सजग, अनुशासन के प्रबल हिमायती एवं व्यसनमुक्ति संस्कार क्रांति के अद्‌भुत प्रणेता है। इसी के कारण आज साधुमार्गी संघ की यश-कीर्ति चहुदिशा में फैल रही है। आचार्यश्री नानेश ने अपनी दिव्य दृष्टि से आचार्यश्री रामलालजी म.सा. का चयन कर संघ को एक मजबूत आधार प्रदान किया।

आचार्यश्री रामेश के पावन विचार सम्पूर्ण समाज में एक अलौकिक क्रान्ति का संचार कर रहे हैं आपके क्रांतिकारी प्रवचन नि:संदेह आज के इस युग में अत्यंत प्रासंगिक है। संघ ने आपके द्वारा प्रदत्त ओजस्वी प्रवचनों को श्री राम उवाच के रूप में संकलित करने का निर्णय लिया। तद्‌नुसार श्री राम उवाच प्रवचन माला का यह नवमं भाग **''गंगा लौट हिमालय आये''** का फरवरी 2008 में प्रकाशन किया गया एवं अब इस पुस्तक का द्वितीय संस्करण आपके हाथों में है। इस पुस्तक के समस्त प्रवचन आचार्य प्रवर द्वारा जयपुर चातुर्मास के अन्तर्गत जन-जागरण हेतु प्रदान किये गये थे।

प्रस्तुत कृति का संरक्षण महाश्रमणीरत्ना श्री इन्द्रकंवरजी म.सा. के निर्देशानुसार विदुषी महासती श्री सुयशप्रज्ञाजी म.सा. ने किया। संपादन हेतु श्री इंद्रचंदजी बैद ने ख्यातनामा शब्द शिल्पी डॉ. आदर्श सक्सेना का चयन किया। संपादित प्रवचनों का समीक्षण कविरत्न् श्री गौतममुनिजी म.सा. द्वारा सम्पन्न हुआ।

इस वर्ष संघ के गौरवशाली राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री सुन्दरलालजी दुगड़ तथा राष्ट्रीय महामंत्री श्री गौतमजी पारख की भावनानुसार संघ ने श्री राम उवाच के प्रकाशन को नवीन स्वरूप देने का निर्णय लिया। उसी अनुरूप उपरोक्तपुस्तक को पूर्व की अपेक्षा और अधिक श्रेष्ठ स्वरूप देने का प्रयास किया गया है ताकि इस पुस्तक की महत्ता के साथ आवरण सज्जा में और अधिक निखार आ सके।

इस पुस्तक के प्रकाशन में हमारे संघ के उदारमना, दानवीर, युवारत्न श्रीयुत अनिलजी मनोजजी एवं नवीनजी देशलहरा निवासी दुर्ग का अर्थ सहकार का आग्रह रहा। निश्चित ही आपकी शासननिष्ठा, श्रद्धा एवं समर्पणा बेजोड़ है संघ आपके प्रति हार्दिक आभार प्रकट करता है। इसी के साथ इस पुस्तक के प्रथम संस्करण के अर्थ सहयोगी श्री रतनलालजी मुकेशकुमारजी राकेशकुमारजी रांका चैन्नई का भी मैं हृदय से आभार प्रकट करता हूँ।

मैं संघ की ओर से तथा अपनी ओर से इस पुस्तक के प्रकाशन में प्रत्यक्ष एवं परोक्ष सहयोगी बनें समस्त आत्मीयजनों का आभार प्रकट किये बिना नहीं रह सकता जिनके सहयोग से ही यह भागीरथी कार्य सम्पन्न हो सका। संपादन में आचार्य प्रवर के मूल भावों को सुरक्षित रखने का पूर्ण प्रयास किया गया है तथापि अज्ञानतावश यदि कोई त्रुटि रह गई हो तो उसके लिये हम हृदय से क्षमाप्रार्थी हैं।

संयोजक

राजमल चौरड़िया

साहित्य प्रकाशन समिति

श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ, बीकानेर

PDF Compressor Free Version

अर्थ सहयोगी परिचय

संघ गौरव, युवारत्न
श्री अनिलजी मनोजजी नवीनजी देशलहरा
दुर्ग (छ.ग.)

स्वनामधन्य श्रेष्ठीवर्य स्व. श्री मानकलालजी देशलहरा मूल निवासी तिंवरी जिला जोधपुर (राज.) का जन्म 1930 को नेवरीकला जि. दुर्ग (छ.ग.) में हुआ। आपको बचपन से ही सुसंस्कारों का खजाना प्राप्त हुआ। अपनी नैतिकता, प्रामाणिकता एवं कर्त्तव्यनिष्ठा से आपने दुर्ग में सिरेमल मानकलाल देशलहरा के नाम से 1960 में थोक कपड़े का व्यवसाय प्रारम्भ किया तथा वर्षों तक थोक कपड़ा एसोसियेशन के तक अध्यक्ष रहे। समाजसेवा, धार्मिक कार्यों, चारित्र आत्माओं की सेवा, स्वधर्मी सहयोग में भी आप सदैव आगे रहते थे।

विदुषी महासती श्री सरोजबालाजी म.सा. की दीक्षा में आपका विशेष सहयोग रहा। स्व. श्री मानकलालजी देशलहरा ने जीवनकाल के प्रारम्भ से ही संघर्षमय जीवन जीया लेकिन अपनी मेहनत एवं लगन से आपने व्यवसाय में अनेक ऊँचाईयों को छुआ। अपने सुपुत्रों, भतीजों एवं परिवार के सभी सदस्यों को व्यवसायिक प्रशिक्षण प्रदान कर उन्हें व्यवसाय में निपुण किया। जो कि आज अपने-अपने कार्य को सफलतापूर्वक आगे बढ़ा रहे है। स्व. श्री मानकलालजी मृदु एवं विनोदी स्वभाव के होने के कारण सिर्फ परिवार में ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण समाज में लोकप्रिय थे। परिवार के सुख-दुःख में आपकी सहभागिता रहती थी। आपका शुभ विवाह स्व. श्री सरदारमलजी श्रीश्रीमाल, थानखम्हारिया की सुपुत्री कुसुमदेवी से हुआ। कुसुम देवी सच्चे अर्थों में धर्मपत्नी के रूप में रही। आप मृदु स्वभाव की समाजसेवी महिला है पिछले 40 वर्षों से आपने चौविहार, रात्रि भोजन त्याग, जमीकंद त्याग एवं अन्य अनेक प्रत्याख्यान ग्रहण कर रखें है।

आप महासती श्री सरोजबालाजी म.सा. की संसारपक्षीय मासीजी है। स्व. श्री मानकलालजी देशलहरा के तीन पुत्र एवं दो पुत्रियां है। बड़ी सुपुत्री सौ. प्रमोद चौपड़ा का विवाह मुंगेली की प्रतिष्ठित व्यावसायिक फर्म सदासुख केशरीमल के श्री कोमलचंदजी चौपड़ा के साथ हुआ। श्री कोमलचंदजी का होलसेल मेडीकल का व्यवसाय रायपुर, भोपाल, मुंबई में फैला हुआ है। द्वितीय

PDF Compressor Free Version

सुपुत्री सौ. सोनिया बेगाणी का विवाह रायपुर निवासी श्री निर्भयजी बेगाणी के साथ हुआ जो रायपुर में व्यवसाय कर रहे हैं। सबसे बड़े पुत्र श्री अनिलजी देशलहरा दृढ़ निश्चय के धनी है। इनकी वर्षों से भावना रही कि आचार्य भगवन का चातुर्मास दुर्ग में सम्पन्न हो और इस दिशा में वे पिछले कुछ वर्षों से लगातार प्रयासरत रहे और अंततः गुरुदेव की असीम अनुकम्पा से दुर्ग साधुमार्गी संघ को आचार्य प्रवर 1008 श्री रामलालजी म.सा. का 2009 का चातुर्मास प्राप्त हुआ और अनिलजी के वर्षों से का स्वप्न साकार हुआ।

श्री अनिलजी देशलहरा आचार्य भगवन के दुर्ग चातुर्मास में चातुर्मास समिति के उप-संयोजक पद पर कार्य कर रहे हैं एवं 4 माह के लिये व्यापार से निवृत होकर सेवा का पूरा लाभ ले रहे हैं, पूरा परिवार सेवा भक्ति में लीन है। आपकी धर्मपत्नी श्रीमती प्रभादेवी देशलहरा है आपने 2 बार मासखमण की तपस्या, 1 बार पन्द्रह की तपस्या एवं 10 बार 9 की तपस्या कर तप का आदर्श रूप उपस्थित किया है। इस वर्ष भी आचार्य देव के चातुर्मास काल में श्रीमती प्रभादेवी ने मासखमण की उग्र तपस्या कर आत्मबल का परिचय दिया है। आप एक धर्मपरायण महिला है एवं चारित्र आत्माओं की विहार सेवा में आपकी विशेष रूचि है। आपके पुत्र रौनक, सिम्बासिस पुणे से एम.बी.ए. की शिक्षा ग्रहण कर चुके है। द्वितीय पुत्र रजत एवं तृतीय पुत्र आदित्य अध्ययनरत है। श्री अनिलजी के थोक कपड़े के साथ-साथ माइनिंग एवं जमीन के क्रय-विक्रय का कार्य भी है।

स्व. श्री मानकलालजी के द्वितीय सुपुत्र श्री मनोजजी ने भी आचार्य प्रवर के दुर्ग चातुर्मास में अपनी विशेष सहभागिता दर्ज करवायी है एवं आपका अधिकांश समय चातुर्मास स्थल पर धर्म आराधना में ही व्यतीत होता है। आप पप्पू भैया के नाम से भी लोकप्रिय है आपकी धर्मपत्नी श्री संगीता देवी भी एक आदर्श महिला रत्न है। श्री मानकलालजी के तृतीय सुपुत्र श्री नवीनजी देशलहरा वर्तमान में समता युवा संघ दुर्ग के अध्यक्ष है एवं संघ के कर्मठ व समर्पित कार्यकर्ता है। चारित्र आत्माओं की विहार सेवा में आपकी विशेष रूचि है। मैकेनिकल इंजीनियरिंग डिग्री होने के पश्चात् भी आप धर्म ध्यान में विशेष रूचि रखते है, आपकी धर्म पत्नी श्रीमती ममता देवी भी सुसंस्कारित एवं आदर्श महिला है।

सम्पूर्ण देशलहरा परिवार आचार्य प्रवर 1008 श्री रामलालजी म.सा. के प्रति विशेष श्रद्धा, निष्ठा एवं आस्था रखता है। आशा है देशलहरा परिवार इसी प्रकार संघ एवं शासन की सेवा कर परिवार के गौरव में अभिवृद्धि करता रहेगा।

PDF Compressor Free Version

अनुक्रम

1. कर ले तूं अपना कल्याण	:	7
2. कर ले तूं अपनी पहचान	:	14
3. मन की गाँठें खोल	:	27
4. इच्छाओं का कर ले अन्त	:	41
5. पाएं सुन्दर शीतल छांव	:	54
6. नष्ट प्रदूषण - सफल पर्युषण	:	71
7. श्रेष्ठ श्रोता - बने उपभोक्ता	:	83
8. खामेमि सव्वे जीवा.....	:	99
9. नमन से निर्वाण	:	114
10. गंगा लौट हिमालय आए	:	129
11. करना घर की सार-सम्हाल	:	139
12. अतिक्रमण, आक्रमण और प्रतिक्रमण	:	145
13. मुक्ति का उपाय कायोत्सर्ग	:	155
14. अहंकार की आहुति	:	163
15. काले कालं समायरे	:	171
16. पाप विशोधन का यन्त्र	:	179
17. शिक्षा का उद्देश्य	:	187
18. दु:ख दोहग दूरे टल्या रे	:	195

PDF Compressor Free Version

1 कर ले तूं अपना कल्याण

श्री सुपार्श्व जिन वंदिए.....।

आर्य सुधर्मा स्वामी के चरणों में उपस्थित होकर जंबूकुमार लौटकर घर पहुँचे और माता से कहा- मातेश्वरी ! मैंने आज सुधर्मा स्वामी के दर्शन किये हैं। माता ने हर्ष से कहा- यह तो तुम्हारा परम सौभाग्य है। तुम्हारी आँखें पवित्र हो गई हैं। तब जम्बूकुमार ने कहा- मैंने आर्य सुधर्मा स्वामी की वाणी भी सुनी है। इस पर माता ने कहा- तुम्हारे कर्ण धन्य हो गये हैं। जम्बूकुमार ने आगे कहा- माता ! मैंने उनकी वाणी को जीवन में उतारा भी है।

आप जरा विचार कीजिये कि तब क्या हो गया धन्य ? देखने से और सुनने से तो एक-एक इन्द्रिय के पावन होने की बात कही गई है। देखने से आँखें और सुनने से कान सार्थक हो गये, पर जीवन सार्थक कब होगा ? जीवन सार्थक कब होता है ? जीवन सार्थक तब होता है जब सुनी बात को हृदयंगम कर लिया जाता है, जब उसे जीवन में उतार लिया जाता है। आप जानते हैं कि शक्कर को, मिश्री को देखने मात्र से मुँह में मिठास नहीं आती। मिश्री के गुण सुनने से भी मुँह मीठा नहीं होता। किन्तु जब मिश्री की डली मुँह में रख ली जाती है, तो फिर मिश्री के गुण कहने या मिश्री को देखने का कोई महत्त्व नहीं रह जाता। क्योंकि मिश्री की डली मुँह में रखने वाला स्वयं मिश्री के गुणों का आस्वादन कर रहा होता है। इसी प्रकार धर्म की बात सुनना और महापुरुषों के दर्शन करना हमारे जीवन के एक अंश की सफलता कही जा सकती है, किन्तु यदि जीवन को धर्ममय बना लिया जाये तो यह कार्य महत्ता में सुनने-देखने से कहीं अधिक बढ़कर कार्य होगा। उससे जो तृप्ति मिलेगी, वह मात्र सुनने से और मात्र देखने से नहीं मिल सकती।

मृगावती महासती प्रभु के यहाँ रुकीं, प्रभु के व्यक्तित्व के

PDF Compressor Free Version

आभा-मण्डल के दर्शन में लीन हो गईं। आर्य चन्दनबाला आदि साध्वियाँ कब गईं, उन्हें पता ही नहीं चला। कथाकार कभी-कभी कह देते हैं कि रात पड़ गई थी, पर ऐसा संभव नहीं लगता कि वहाँ रात पड़ जाती। किन्तु मर्यादा का अतिरेक हो गया। आप जानते हैं कि संतों के स्थान पर साध्वियों का, बहिनों का विकाल में रुकना उचित नहीं होता, किन्तु मृगावती के विकाल का प्रसंग बन गया था अत: मृगावती के अपने स्थान पर पहुँचने पर चन्दनबाला ने कहा- मृगावतीजी ! आप अत्यंत सम्माननीय वंश की नारीरत्न हैं और अत्यंत उत्कृष्ट त्याग-वैराग्य भाव से आपने संयमी जीवन स्वीकार किया है, अत: आप जैसी शीलवती महासती के द्वारा मर्यादा का अतिक्रमण होना उचित नहीं है। मृगावती ने उस आरोप को सुना और पलटकर कह सकती थी- ऐसा मैंने कौनसा अनर्थ कर दिया ? थोड़ी देर ही तो हो गई। परन्तु आपने भी मेरा कौनसा ध्यान रखा ? एक साध्वी को आप अकेला छोड़ आईं। कई बातें कही जा सकती थीं, पर मृगावती ने क्या वे बातें कहीं ? नहीं कहीं, बल्कि आत्मनिरीक्षण किया और मन ही मन आलोचना में उतर गईं। चिन्तन किया कि हा! मेरी गुरुवर्या को मेरे कारण कष्ट हुआ। हे आत्मन् ! तुमने यह क्या किया ? यद्यपि सांसारिक रिश्ते में मृगावती मौसी थीं। सोच लेतीं मन में कि मैं मौसी हूँ। वह बड़ी सती हो गई तो क्या हुआ ? मौसी को ऐसा बोलना चाहिये क्या ? पर उनके मन में कोई ऐसी भावना नहीं बनी, बल्कि वे स्वयं आलोचना में उतरीं कि मेरे निमित्त से आज गुरुवर्याजी को इतना म्लान होना पड़ा ! मेरे निमित्त से इतनी पीड़ा, इतना कष्ट हुआ! वे स्वयं को देखने लगीं कि मैंने यह क्या किया ! क्या मैंने इसलिए साधु-जीवन स्वीकार किया है ? क्या यही है धर्म का जीवन में रमना ? अब विचार कीजिये कि मृगावती ने महावीर के केवल दर्शन ही नहीं किये थे, उनकी वाणी ही नहीं, बल्कि जीवन में महावीर को उतारती भी चली गई थी और जैसे ही महावीर जीवन में उतरे, वे कैवल्य आलोक से आलोकित हो गईं।

इन दो प्रसंगों की बात जिस स्थिति से जुड़ती है, उसकी बात कर लूं, क्योंकि महत्त्व उसी का है। आप जानते हैं कि पर्युषण पर्व आ

PDF Compressor Free Version

रहे हैं, पर हमारे अंतर के आम के पेड़ पर मंजरियाँ आई हैं या नहीं, इस पर भी विचार करें। यदि नहीं आई हैं तो भीतर की कोयल नहीं बोल पाएगी। पर्व पर्युषण आ रहे हैं और अभी भी अंतर की कली विकसित नहीं हो तो क्या हम लाभ उठा पाएँगे ? उस स्थिति में क्या पर्व पर्युषण को आप सार्थक कर पाएंगे। पर्व पर्युषण इसी वर्ष नहीं आ रहे हैं, वे तो वर्षों से, सदियों से आते रहे हैं। कहा तो यहाँ तक जाता है कि तीर्थंकर देव स्वयं भी पर्युषण की आराधना करते हैं। गणधर भी इसकी आराधना करते हैं। यह बात अलग है कि उनकी आराधना व हमारी आराधना में अंतर आ गया है। उनका पर्युषण एक अहोरात्र का होता था, किन्तु हमारी मति वैसी नहीं है इसलिए हमें अपने मन के वस्त्र को धोने के लिए सात दिन की व्यवस्था दी गई है। क्योंकि हमारा ज्यादा से ज्यादा समय मलिनता अर्जित करने में लगता है, निरन्तर मलिनता अर्जित होती रहती है, धुलाई का समय ही नहीं मिलता। पक्खियाँ निकल जाती हैं, प्रतिक्रमण नहीं होता है ! कभी संत कह दें तो कहते हैं, हम अतिक्रमण कहाँ कर रहे हैं जो प्रतिक्रमण करें। जब हम अतिक्रमण कर चुके होते हैं या करते है तब एहसास ही नहीं होता कि हम अतिक्रमण कर रहे हैं। जयपुर के व्यापारी भूल चुके होंगे कि इन बरामदों पर अधिकार उनका नहीं है। कौनसे बरामदे ? जौहरी बाजार के। उन बरामदों पर अधिकार किसका था ? भले व्यापारी अब कहें कि अधिकार उनका था, पर क्या हकीकत में उनका अधिकार था ? वर्षों से बरामदों को उन्होंने अपना स्थान या अपनी दुकान बना ली थी पर अब जब सरकार ने खाली करवाया तो पीड़ा होने लगी कि हमारे साथ अन्याय क्यों किया जा रहा है ? पर वे यह नहीं सोचते कि उनका अधिकार था कहाँ ? अतिक्रमण करने वाले नहीं सोचते कि वे अतिक्रमण कर रहे हैं। हम-आप देखें तो समझ में आ जायेगा कि अतिक्रमण का समय बहुत अधिक होता है। हम अपने-आप में स्थित बहुत कम होते हैं। अपने-आप में स्थित होना स्वभाव है, इससे बाहर निकलना सारा का सारा अतिक्रमण है। जीवन के अनमोल क्षण अतिक्रमण में चले जाते हैं, पर हम प्रतिक्रमण के लिए तैयार नहीं होते। पक्खी या चातुर्मासिक के दिन आयें तो उपस्थिति बढ़ जाती है। पयुर्षण में थोड़ी और बढ़ जाती है। हम देवसिय, पक्खी आदि नहीं कर पाते हैं,

PDF Compressor Free Version

इसलिए पर्युषण आराधना के लिए सात दिन की व्यवस्था की गई है कि वर्षभर में सफाई न कर सकें तो सात दिन में ऐसी धुलाई कर लें कि परिक्षपणा बन जाये। कर्मों की झूसणा कर सकें। आत्मशुद्धि कर सकें। इसलिए कुछ अंतर आ गया है। पर्युषण पर्व की आराधना तीर्थंकर देवों ने भी की और कल से हमारे लिए भी पर्युषण पर्व आ रहा है, पर आने मात्र से कल्याण नहीं होगा। पर्युषण तो हमने भी बहुत मनाये हैं, पर आत्मशांति आत्मतृप्ति-आत्मसंतोष हमने कितना प्राप्त किया ? अब इसी का लेखा-जोखा करने की आवश्यकता है कि हमारी आत्मा तृप्त हो रही है या नहीं ?

जंबूकुमार की माँ कहती हैं- दर्शन से आँख पवित्र हुई, व्याख्यान-श्रवण से कान पवित्र हुए, परन्तु सुधर्मा की वाणी को जीवन में उतारा तो जीवन पवित्र हो गया। हमें भी सोचना है कि हमें केवल आँख पवित्र करनी है या केवल कानों को पवित्र करना है या कुछ और भी सार्थक करना है ?

अहमदाबाद में एक व्यक्ति ने एक कम्पनी खोली। उसने अनेक प्रकार के रसायन मिलाकर ऐसा कैमिकल तैयार किया कि कोई दीवार या फर्श कितना भी गंदा हो, उसका प्रयोग उस पर किया जाये तो दीवार या फर्श की गंदगी तुरन्त दूर हो जाती थी। जब प्रयोगों के माध्यम से उसने प्रभावों की पुष्टि कर ली तब उसके बड़े भाई ने सुझाव दिया कि इसका पहला प्रयोग अपने आराधना स्थल में किया जाये। उसने प्रस्ताव दिया कि हरिद्वार के मंदिर में जो दीवारें गंदी हो गई हैं वहाँ पहले इसका प्रयोग किया जाये। प्रस्ताव मंजूर कर लिया गया। वहाँ के पुजारियों-अधिकारियों आदि से चर्चा की गई और तय हुआ कि पहले गर्भगृह की दीवारों-दरवाजों की सफाई की जानी चाहिये। उसने कैमिकल का प्रयोग किया और आश्चर्यकारी परिणाम सामने आया। खभों पर परतें जमीं थी। भक्तों के द्वारा जो अर्ध्य अर्पित किया जाता था और जब हाथ भर जाते थे तो पौंछने का काम उन्हीं खंभों पर होता था। तेल-घी के हाथ निकट के खंभे पर पौंछ लिये जाते थे, इस कारण उन पर मैल की परतें जम गई थीं। भक्त आराधना स्थल पर पहुँचता है पर अपनी प्रवृत्तियों से आराधना स्थल को

PDF Compressor Free Version

भी मलीन बना देता है। जैसे मनोवृत्ति मलीन होती है, वैसे ही आराधना स्थल को मलीन बना देता है। परिणामस्वरूप आराधना स्थल की निर्मलता समाप्त हो जाती है।

पूज्य गुरुदेव शिक्षा के प्रसंग से फरमाते थे कि मुख से कफ या नाक से श्लेष्मा आए तो उसे जहाँ-तहाँ नहीं फेंक दिया जाये। एक डॉक्टर का हवाला देते हुए वे बताते थे कि युगदृष्टा जवाहराचार्य का स्वास्थ्य नरम चल रहा था। डॉक्टर को बुलाया गया। डॉक्टर को जुकाम था, उसने रूमाल निकाला, उसमें श्लेष्मा लेकर हाथ से मसलकर पाकेट में रख लिया। यह नहीं किया कि जहाँ-तहाँ नाक साफ कर लेता। यदि रेत हो तो ऊपर रेत डाल दी जानी चाहिए ताकि मक्खियाँ न भिनभिनाएँ।

उस भाई ने केमिकल का प्रयोग किया तो मलीनता दूर हो गई। वे स्तंभ सामान्य स्तंभ नहीं थे। वे स्वर्णस्तंभ थे। चौंके, ये खंभे ? उनकी जानकारी वर्षों से न ट्रस्टियों को थी, न अधिकारियों, न ही पुजारी को। क्योंकि वर्षों से उन पर मलिनता की परतें जमी हुई थीं इसलिए उनका मूल स्वरूप खो गया था। कोई जानता ही नहीं था कि वे सोने के खंभे हैं। अब, जब जानकारी मिल गई तब फिर उन खंभों पर कितनी सुरक्षा करेंगे ? तनिक विचार कीजिये। घर पर चढ़ने वाली पेढ़ियाँ हैं, उन पर पत्थर जड़ा हुआ है। यदि कोई जौहरी उन पर चढ़ता हुआ कहे कि सेठजी ! ये पत्थर बेचना चाहते हो क्या? तब आपका मन क्या बोलेगा ? आप सोचेंगे क्या बात है, इसमें क्या रहस्य है ? वह कह दे इनमें कीमती रत्न हैं तब वह पत्थर, जो पैरों में रखा था, जो ठोकरें खा रहा था, तुरंत सुरक्षित कर दिया जाएगा। फिर उस पत्थर को फटाफट निकाल लिया जाएगा। अब तक न तो चोर का भय था, न डाूक का। पर अब कितना भय होगा या कि इसे उठाकर तिजोरी में बंद कर दो। इसलिए कहा गया है कि मनुष्य-जीवन अनमोल है। अब तक आत्मा पर मलीनता के लेप लगा रखे हैं और इतने लेप चढ़ाए हैं कि हम उसके असली स्वरूप को ही भूल गये हैं। उस स्वरूप के बोध के लिए ही पर्युषण पर्व है। पर्युषण के माध्यम से जो वीतराग वाणी कानों में प्रवेश करती है, वह केमिकल है। हमारा ऐसा पुरुषार्थ होना चाहिये कि इस केमिकल के प्रयोग से हम

PDF Compressor Free Version

आत्मा को शुद्ध-परिशुद्ध बना लें। उसके लिए आलोचना का सूत्र दिया गया है कि आलोचना-प्रतिक्रमण करो। आलोचना-प्रतिक्रमण के केमिकल से यह आत्मा शुद्ध बन जाएगी। पूर्व में विषय चला था कि आलोचना से किस फल की प्राप्ति होती है ? तब भी मैंने बताया था कि आलोचना से जीव मोक्षमार्ग में विघ्नकारक और अत्यंत संसारवर्द्धक मायाशल्य, निदानशल्य और मिथ्यादर्शनरूप शल्य को निकाल देता है और ऋजुभाव को प्राप्त होता है। ऋजुभाव को प्राप्त जीव मायारहित होता है, अत: स्त्रीवेद और नपुंसकवेद का बंध नहीं करता है। यदि पूर्वबंध हों तो उनकी भी निर्जरा करता है। उत्तराध्ययन सूत्र में स्पष्ट कथन है -

आलोयणाए णं माया-नियाण-मिच्छादंसणसल्लाणं मोक्खमग्गविग्घाण अणंतसंसारबद्धणाणं उद्धरणं करेइ। उज्जुभावपडिवन्ने य णं जीव अमाई इत्थीवेय नपुंसगवेयं च न बंधइ। पुव्वबद्धं च णं निज्जरेइ।

(उत्तरा.२९/५)

आलोचना व्यक्ति की बुद्धि और उसके विवेक को जागृत कर देती है। तब निश्चित है कि ऐसा व्यक्ति स्वत: प्रेरित हो जाता है। उसे किसी के मार्गदर्शन या किसी से प्रेरणा की अपेक्षा नहीं रहती। आप सबके लिये विशेष अनुकूल स्थिति है। पर्युषण पर्व आ रहे हैं और संत भी प्रेरणा दे रहे हैं, परन्तु मैं चाहता हूँ कि प्रेरणा देने की जरूरत ही न पड़े। इशारा भी न करना पड़े। क्योंकि माना जाता है कि जो बिना कहे कार्य करे वह देव, जो इशारे से समझे वह मानव, परन्तु जो इशारे से भी न समझे वह क्या होगा ? आप मानव से ऊँचे उठने की दिशा में आगे बढ़ें। आपको भगवान की वाणी प्राप्त है, आप प्रबुद्ध हैं, फिर भी इशारे और प्रेरणादायी प्रवचन आपको उपलब्ध हैं। इनका भी लाभ उठायें और पयूर्षण पर्व के माध्यम से आत्मा को निर्मल बनायें।

लाल कोठी क्षेत्र के लिए हीरावतजी और उनका ही नहीं, पूरे क्षेत्र का आग्रह है कि यदि संत-सतियों का योग मिले तो आराधना की स्थिति उपस्थित होगी। इनके आग्रह से वि. श्री प्रेमलताजी म.सा. का, जिनकी प्रवचन में पटुता है, 4 ठाणे से पधारना हो गया है तो वहाँ भी संयोग प्राप्त हो सकता है। यहाँ

PDF Compressor Free Version

के लिए कई बातें सामने आती रही हैं कि हाल छोटा पड़ता रहा है। कहीं जावें तो छांटे-पानी की असुविधा हो जाती है। मैंने सुझाव दे दिया कि आपके पास गुंजाइश हो तो हम इतने साधु-साध्वी हैं, जो अलग-अलग स्थानों पर भी उद्‌बोधन दे सकते हैं। आचार्यदेव का घाटकोपर में चातुर्मास था। वहाँ सुनने वाले 5000/7000 थे। स्थान छोटा ही था। जहाँ तक मुझे याद है, 5 स्थानों पर प्रवचन करवाये गये थे। यहाँ पर भी यदि संघ की व्यवस्था हो, तो हमारी तरफ से रुकावट नहीं है। कोई सोचे शहर में अलग नहीं होता है, ऐसा नहीं है, यह अलग-अलग व्याख्यान की बात नहीं है, किंतु प्रत्येक सुन सके, इस दृष्टि से वैसी तैयारी हो तो उचित व्यवस्था का सूत्रपात किया जा सकता है। मेरा एक ही उद्देश्य है कि आने वाला व्यक्ति आठ दिन में आत्मशुद्धि का केमिकल लेने में सफल हो और आत्मा को उज्ज्वल बनाये। पर्युषण पर्व की महिमा से आप सभी परिचित हैं इसलिये अन्तरमन को जागृत करें, यही मेरी भावना और कामना है।

❖ ❖ ❖

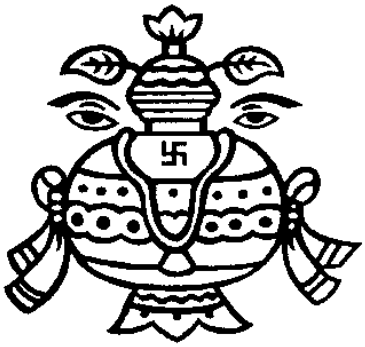

PDF Compressor Free Version

2 कर ले तूं अपनी पहचान

राजकुमार गौतम को जब यह ज्ञात हुआ कि अरिहंत अरिष्टनेमि ग्रामानुग्राम विचरण करते हुए उसी के नगर में पधार गये हैं और बाहर उद्यान में विराजे हुए हैं तब उसके मन में भावना जगी कि मैं भी प्रभु के दर्शन करूँ और वह प्रभु का दर्शन करने के लिए अरिष्टनेमि भगवान के चरणों में जा पहुँचा। उस समय अरिष्टनेमि भगवान ने उपस्थित परिषद को देशना दी। उन्होंने अपनी देशना में कहा- अपनी पहचान करो।

बंधुओ ! संदर्भ पुराना है, परन्तु बात बहुत पते की है। इंसान सभी को देखता रहता है, सभी को परखता रहता है, परन्तु क्या वह स्वयं को भी परखता है, स्वयं की भी पहचान करता है ? सत्यता तो यह है कि इंसान स्वयं को ही भूला रहता है। स्वयं के द्वारा स्वयं की पहचान करना जितना कठिन काम है, उतना कठिन काम और कोई नहीं है। व्यक्ति सोचता है कि स्वयं की क्या पहचान करना, स्वयं को तो मैं जान ही रहा हूँ, किन्तु यथार्थ में व्यक्ति स्वयं से जितना अनजान होता है उतना अनजान अन्य विषयों से नहीं होता। विदेशों में क्या हो रहा है और पूरे विश्व में क्या घटनाएँ घट रही हैं, उनका ज्ञान वह अपने मस्तिष्क में भरता रहता है। पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से तथा टी.वी., रेडियो आदि के माध्यमों से और अन्य न जाने कितने-कितने साधनों के माध्यम से वह जानकारियाँ इकट्ठी करता रहता है, पर मनुष्य का मस्तिष्क स्वयं से ही अनजान बना रहता है। इससे बढ़कर और क्या बदकिस्मती हो सकती है कि मनुष्य अपने से बाहर की तो सारी जानकारी रखे, परन्तु अपने स्वयं से अनजान बना रहे ? यह तो अज्ञान की ही नहीं, दुर्भाग्य की भी पराकाष्ठा हुई। भगवान अरिष्टनेमि इसी अज्ञानता को दूर करने की देशना दे रहे थे- ''अपनी पहचान करो।'' राजकुमार गौतम ने प्रतिबोध प्राप्त किया और उनका जीवन धन्य हो गया। जो भी अपने को पहचान लेता है, उसका जीवन बदल जाता है।

PDF Compressor Free Version

बंधुओ ! आपने उस सिंह-शावक की कथा सुनी होगी जिसकी माँ उसे जन्म देने के बाद मर गई थी और जिसे एक गडरिये ने अपनी भेड़ों और उनके बच्चों के साथ पाला था। भेड़ों के बीच पलने के कारण वह भी अपने-आप को भेड़ ही समझने लगा था और उसका व्यवहार भी भेड़ों के जैसा हो गया। परन्तु एक बार एक सिंह ने भेड़ों के उस झुण्ड पर हमला कर दिया। उसकी दहाड़ सुनकर सभी भेड़ें भाग चली और उनके साथ वह सिंह-शावक भी भाग गया। दूसरे दिन पानी पीते समय उस सिंह-शावक ने जल में अपना प्रतिबिम्ब देखा। उसे बहुत आश्चर्य हुआ कि उसकी आकृति तो पिछले दिन दहाड़ने वाले सिंह से मिलती थी, अपने आस-पास खड़ी भेड़ों से नहीं। तब उसने सोचा कि मैं भी गर्जना करके देखूं । उसने केवल जिज्ञासावश गर्जना की, परन्तु उसकी गर्जना सुनकर सब भेड़ें भागने लगीं। तब उसने अनुभव किया कि उसका स्वभाव भी उन भागने वाली भेड़ों के जैसा नहीं था। उसे विश्वास हो गया कि वह भेड़ था भी नहीं। उसका अज्ञान दूर हो गया, उसने अपनी पहिचान कर ली और उसका जीवन बदल गया। इसके बाद वह भेड़ों के साथ नहीं रहता था। ऐसे ही जो अपनी पहचान कर लेता है उसका जीवन बदल जाता है। वह इस संसार और अपने जीवन की वास्तविकता समझ जाता है। तब वह राग-द्वेष-कषाय आदि से अपनी आत्मा को मलीन नहीं होने देता। तब वह सच्चा वीर बन जाता है और तभी वह 'वीर' के पंथ का सच्चा अनुयायी कहलाने का अधिकारी भी बन पाता है। जैसे वह सिंह-शावक अपनी पहचान कर पाया। वैसे ही आप भी अपनी पहचान 'वीर' के रूप में करके 'महावीर' के संघ में मन-वचन-काया और कर्म से सदस्य बन जायें। इस प्रकार आप उस अज्ञान को उतार फेंकेंगे जो किसी दुर्भाग्य या संयोग से आपके साथ वैसे ही जुड़ गया है जैसे सिंह-शावक के साथ जुड़ गया था। ध्यान रखिये कि आपके भीतर भी वह 'वीरत्व' भरा हुआ है। आप धर्म का उद्घोष करके तो देखिये, माया-मोह-लोभ-तृष्णा का सारा रेवड़ भाग खड़ा होगा। आपकी भी कामना जगे, जिज्ञासा उत्पन्न हो तो वह ज्ञान प्राप्त हो सकता है जो आपको अपनी पहचान करा दे। इसके लिये पुरुषार्थ जागृत कीजिये।

PDF Compressor Free Version

आपके अंदर वह पुरुषार्थ है, पर अब तक आत्मा उस पुरुषार्थ को जागृत नहीं कर पाई है। यह पर्युषण पर्व उसी पुरुषार्थ को जगाने के लिए उपस्थित हुए हैं।

ये पर्व शिरोमणि आये, गाफिल क्यों सोय गमावे रे, ।।टेर।
सोता तो गोता खावे, जाग्योड़ा माल उड़ावे
क्यों वृथा समय गमावे रे ॥ १॥
कष-आय कषाय कहाते, प्रभुवर से दूरी बढ़ाते
लख चौरासी भटकावे रे.....॥ २॥
नहीं मनुहारयां करवाणी, करो तपस्या कर्म खपाणी
गर सुख मुक्ति का चावे रे, ये पर्व..... ॥ ३॥
उठ जाग गुरु समझावे, क्यों इत-उत तू भरमावे
ले ज्ञान मशाल फरमावे रे, ये पर्व.....॥ ४॥

बंधुओ ! ये पर्व सारे पर्वों में शिरोमणि है, उत्तम है। अन्य पर्व आश्रव को बढ़ाने वाले हैं, अन्य पर्व भोगों की प्रेरणा देने वाले हैं, किन्तु पर्व पर्युषण भोग से योग की ओर ले जाने वाले हैं, 'पर' से 'स्व' में स्थापित करवाने वाले हैं। ये हमारी भेड़-चाल को समाप्त करके सिंह का शौर्य जागृत करवाने वाले हैं, ये आत्मलक्षी पर्व हैं और आत्मलक्षी पर्व ही शिरोमणि अवस्था प्राप्त करवाने वाले होते हैं।

बंधुओ ! व्यक्ति अपनी पहचान क्यों भूला रहता है, इसके अनेक कारण होते हैं। एक कारण होता है सुसंस्कारों का अभाव और धन का मद। कल्पना कीजिये कि एक बहू विपुल दहेज लेकर आती है, बहू को सासूजी आवाज लगाती हैं कि बहूरानी ! नीचे पधारो, गाँव के पंच पधारे हैं। बहूरानी का उत्तर होता है- अभी मैं अपने मेकअप में लगी हूँ, देर लगेगी आने में। वहीं यदि बहू संस्कारित होती और सासूजी आवाज लगाती तो वह बहू सम्मान प्रकट करती हुई आती, सभी को नमस्कार कर आशीर्वाद प्राप्त करती और विनय का स्वरूप उपस्थित करती। ये संस्कार कैसे जगे ? कैसे मिले ? ये संस्कार कहीं बाहर नहीं, हमारे भीतर ही हैं। किन्तु हम इन संस्कारों पर इस प्रकार के पर्दे या आवरण डाल देते हैं कि उन आवरणों के कारण यथार्थ का बोध नहीं कर पाते और अयथार्थ में

PDF Compressor Free Version

जीते हुए मानसिक यातनाओं का सामना करते हैं। तब हम न जाने कितने-कितने तनावों और मानसिक यंत्रणाओं को सहने के लिए विवश हो जाते हैं।

अनेक बार यह भी देखा जाता है कि व्यक्ति अंदर ही अंदर टूट जाता है, गमगीन बना रहता है। परिणामस्वरूप आत्महत्या तक के विचार उसमें उत्पन्न होने लगते हैं। ऐसा क्यों होता है ? क्योंकि उसने स्वयं की पहचान नहीं की होती है। वह बाहर ही बाहर भटकता रहा होता है। बाहर भटकने वाला बाहर से तो बहुत-कुछ अर्जन कर लेता है, पर स्वयं का जो अर्चन होना चाहिए, वह हो नहीं पाता। अंतर में जो परमात्मा का अर्चन होना चाहिये, वह घटित नहीं हो पाता। ऐसी स्थिति में वह भयाक्रांत बना रहता है। अनेक प्रकार के भयों से भयभीत होता है। जिस समय वह भयभीत होता है, उस समय उसके भीतर एक रसायन पैदा हो जाता है। उसे इसका अनुभव नहीं हो पाता, किन्तु आज का विज्ञान इस मानसिक अवस्था के प्रमाण प्रस्तुत करता है। एक व्यक्ति प्रफुल्लता में प्रवाहित हो रहा है तब उसके शरीर के, रक्त की शोध की जाये और एक जब भयभीत है तब उसके खून का टेस्ट किया जाये तो दोनों की रिपोर्ट में अंतर आयेगा। वह अंतर यह झलकाता है कि अमुक व्यक्ति अभी भय की अवस्था से गुजर रहा है। कवि आनन्दघनजी कहते हैं- भय हमें साधना में गति करने नहीं देता, स्वयं की पहचान नहीं करने देता। अनेक प्रकार के भय वह बाहर की पोजीशन से इकट्ठा करता रहता है।

एक सम्राट् के मन में भाव जगा कि मैं अपना सुन्दर फोटो बनवाऊँ ? कभी-कभी ऐसी भावना जग जाती है। आज का मनुष्य तो विशेष रूप से अपने फोटो का प्रेमी बन गया है। एक समय था, जब व्यक्ति नाम से राजी हो जाता था। उसने दान दिया और उसका नाम अखबार में आ गया तो वह राजी हो जाता, पर आज नाम से संतोष नहीं होता। नाम के साथ वह अपना फोटो भी प्रकाशित हुआ देखना चाहता है। और फोटो कैसा होना चाहिये ? क्या उसमें आँखें टेढ़ी-मेढ़ी हों, कपड़े फटे हों, नाक भौंडी हो, ऐसी होनी चाहिए ? अरे क्या बतायें, फोटो खिंचवाने के लिए किसी वृद्ध पुरुष से कह दो तो वह भी बन-ठनकर, साफा-पगड़ी

PDF Compressor Free Version

बांधकर झब्बा-कुर्ता पहनकर और मूंछों में ताव लगाकर बैठेगा और फोटोग्राफर से कहेगा- मेरी फोटो ठीक आनी चाहिये। और फोटोग्राफर सुन्दर फोटो आवे उसके लिए कैमरे में अपनी आँखें गड़ायेगा और कहेगा- थोड़े-से सीधे हो जाओ। आप ठीक हो गये तो फिर कहेगा- थोड़ा मुस्कराओ। और फोटोग्राफर के कहने से उसके चेहरे पर थोड़ी प्रफुल्लता आ जाती है। चाहे उसके अंतर में कितना भी दु:ख हो, पर ऊपर से वह मुस्कान लाने की कोशिश करता है। यह मुस्कान ऊपरी होती है और थोड़ी देर के लिए लाई जाती है। पर संत कहते हैं कि इस फीकी मुस्कान से गरज सरने वाली नहीं है। यथार्थ में मुस्कान वह है कि जिसमें हम अंतर से प्रफुल्लित हो जायें। फिर चेहरे पर मुस्कान लाने की आवश्यकता नहीं रहेगी। तब हर समय चेहरा गुलाब के फूल की तरह खिला रहेगा। यह पर्व पर्युषण ऐसी ही स्थायी आंतरिक मुस्कान पैदा करने का संदेश देता है। आन्तरिक भय के भूत को यदि भगा दिया जाये तो फिर देखिये, चेहरे पर कैसी खुशहाली छा जायेगी ! फिर चेहरे पर किसी भी प्रकार की म्लानता का भाव नहीं दिखेगा। चिन्तन करिये, क्या रोने से राज मिलता है ? यदि व्यक्ति रोता रहे कि मुझे सम्राट् बना दिया जाये तो रोने से वह सम्राट् नहीं बन सकता है। किन्तु यदि पुरुषार्थ करे तो एक दिन सम्राट भी बन सकता है। आपको विश्व विजेता तैमूरलंग की कथा मालूम होगी, जो एक गडरिया था। परन्तु जब उसका पुरुषार्थ जागृत कर दिया गया तो वह महान् विश्वविजेता बन बैठा। व्यक्ति का भाग्य कब जाग जाता है, यह तो समय पर ही पता चलता है। समय से पहले कितने ही प्रयास करो, कुछ नहीं होगा। आप तो यह ध्यान में रखकर पुरुषार्थ करते चलो-

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन:

कर्त्तव्य-कर्म में कमी नहीं होनी चाहिए। यह नहीं सोचें कि भाग्य में होगा तो मिल जाएगा। भाग्य के भरोसे बैठे रह जाने से कुछ नहीं मिलता क्योंकि भाग्य भी पुरुषार्थ के बिना फलता नहीं है। इसलिये लाभ मिले या ना मिले, कभी परेशान नहीं होना चाहिए, कर्म करते रहना चाहिए।

PDF Compressor Free Version

भगवान ऋषभदेव का जीवन देखिये, बेले की तपस्यापूर्वक श्रमणत्व स्वीकार किया। उसके बाद प्रतिदिन भिक्षा के लिए भ्रमण करते थे। एक दिन निकला, दूसरा दिन निकला और ऐसा करते-करते दिन ही नहीं महीने निकल गये ? एक वर्ष तक वे भ्रमण करते रहे। उन्होंने मन में यह नहीं सोचा कि कब तक भिक्षा के लिए भ्रमण करता रहूँ, साधुपना लेकर घर-घर घूमता रहूँ ? वे यदि ऐसा सोच लेते कि जिस दिन भिक्षा मिलनी होगी, मिल जाएगी, घर-घर क्यों घूमूं, तो क्या सफल होते ? किन्तु वे महापुरुष भाग्य के भरोसे नहीं रहे। जो पुरुषार्थी होते हैं वे पुरुषार्थ करते हैं। हम भी केवल भूतकाल के आधार पर रोना न रोयें कि मेरे तो यह हो गया। अरे ! क्यों लकीर के फकीर बनकर उस लकीर को पीट कर रो रहा है ?''

बीती ताहि बिसारि दे,
आगे की सुधि लेय''

- अब आगे की सुध ले कि क्या करना है। आगे गंतव्य की तरफ कदम बढ़ाना है, बीती बातों को लेकर रोता रहेगा तो कभी जीवन में शांति नहीं ले पाएगा।

बंधुओ ! पर्युषण पर्व इसलिए आये हैं कि बीती गांठों को खोल दो। यदि गाँठों को नहीं खोला गया तो स्राव नहीं हो पाएगा, वहीं रुक जाएगा, गांठों के पीछे रह जाएगा और वे गांठें पूरा रस पी जाएंगी। पर यदि उन गांठों को खोल दिया, भुला दिया तो तन-मन दोनों स्वस्थ व प्रफुल्लित हो जाएंगे। आपसे कहें- प्रतिक्रमण याद करिये, तो कहोगे- प्रतिक्रमण याद नहीं होता। परन्तु किसी ने कोई अप्रिय बात कह दी, तो वह वर्षों तक याद रखते हैं, जबकि आपने क्या कहा था, वह याद नहीं रहता है। भगवान कहते हैं कि दुनिया ने क्या कहा उसे भूल जाओ और तुमने क्या कहा, उसे याद कर गांठों को खोलने का प्रयत्न करो। यह नहीं कि आठ दिन में बेला, तेला, अठाई कर लिया, संवत्सरी का प्रतिक्रमण भी कर लिया, किन्तु भूतकाल की बातें दिमाग में ठसाठस भरी रखीं तो आराधना सही तरीके से नहीं हो पाएगी। आराधना नहीं होगी तो आत्मा भी अपनी मुस्कान बिखेर नहीं पाएगी।

PDF Compressor Free Version

मैं बता रहा था उस सम्राट् की बात। बहुत-से चित्रकार इकट्ठे हुए और उन्होंने चित्र बनाये, पर राजा ने सारे के सारे चित्र नापसंद कर दिये। एक छोटा चित्रकार बच गया था। उसने निवेदन किया- मैं बनाऊंगा। राजा ने कहा- ये बड़े-बड़े धुरंधर भी जब मेरी पसन्द का चित्र नहीं बना सके तो तूं क्या कर पाएगा ? बंधुओ ! हमारी आदत है कि हम यही सोच लेते हैं कि जब बड़े-बड़े धुरंधर भी कोई काम नहीं कर पाये तो ये छोटे क्या कर पाएँगे ? किन्तु आप जानते होंगे कि चन्द्रगुप्त के स्वप्नों में बताया गया था कि छोटे-छोटे बछड़े भरी हुई गाड़ी को खींच रहे हैं-

छोटा-छोटा बालूड़ा, आया धर्म की ओट।
बूढ़ा हुआ तो क्या हुआ, रह गया ठोठमठोठ।

वृद्ध पुरुष वर्षों तक धर्मकरणी कर लेते हैं, फिर भी वहीं के वहीं खड़े रहते हैं। तेली का बैल दिनभर चलकर मेहनत करता है, किन्तु रहता वहाँ का वहीं है। सम्राट् ने कहा- बड़े-बड़े धुरंधर नहीं बना सके तो तूं क्या बना पाएगा ? उस छोटे चित्रकार ने कहा- मैं क्या बना पाऊंगा यह तो बना लूं तब देखियेगा, पर मेरा विश्वास है कि मैं आपका मनपसन्द चित्र बना पाऊँगा। राजा ने कहा- ठीक है, बनाओ। चित्रकार ने कहा- हुजूर मेरी यह भावना है कि अकेला चंद्र शोभित नहीं होता। वह तारागणों के बीच ही सुशोभित होता है। इसलिए मैं चाहता हूँ कि अकेले आपको ही नहीं, किन्तु आपके सभासदों को भी चित्र में अंकित किया जाये। सम्राट् ने कहा- ठीक है, ऐसा ही करो। उसे इजाजत मिल गई। उसने एक बड़ा पाटिया लिया और अपने इष्टदेव का स्मरण कर चित्र बनाने की तैयारी में बैठा, इतने में एक दरबारी आ गया और बोला- चित्रकार साहब ! नमस्कार। चित्रकार ने नमस्कार का उत्तर देकर पूछा- भाई ! बोलो, क्या बात है ? उसने कहा- देखो तुम दरबारियों का चित्र बना रहे हो, पर मेरी नाक ऊँची चढ़ी हुई है, भौंडी है, पर तुम चित्र में ऐसी मत बना देना। यह अपने घर की बात है, तुम यहाँ रहोगे तो कुछ खर्च भी होगा। और उसने सोने की कुछ अशर्फियाँ उसके सामने रख दीं। चित्रकार ने कहा- ठीक है, जैसी कहोगे, वैसी बना दूंगा। वह तो चला

PDF Compressor Free Version

गया। तभी वृद्ध मंत्री का संदेश पहुँचा। वृद्ध मंत्री का संदेश पहुँचे, फिर वह घर में बैठा कैसे रहता ? इसलिए हाजिर हो गया सेवा में। मंत्री ने कहा- तुमने बड़ी भारी समस्या खड़ी कर दी है। तुम सम्राट् के साथ सभा को भी चित्रित करना चाहते हो। यह तो ठीक है, पर अब मैं बूढ़ा हो गया हूँ लेकिन जब सभा प्रारंभ हुई थी तब मैं जवानी में था। इसलिए मेरा जवानी का चित्र अंकित करना। चित्रकार ने कहा- ठीक है। उन्होंने भी चित्रकार को भेंट दी। वह घर पहुँचा। इतने में सेनापति आ गया और बोला- ऐ चित्रकार ! ध्यान रखना, मेरा पैर युद्ध में कट गया था। मुझे बैसाखी के सहारे चलना पड़ता है, पर फोटो में ऐसा अंकन नहीं होना चाहिये। उसमें तो पैर पूरा होना चाहिये। चित्रकार ने स्वीकृति दे दी। सेनापति भी भेंट दे कर रवाना हुआ। तब तक राजपुरोहितजी आ धमके और बोले- चित्रकारजी ! चित्रकार बोला- पंडितजी आप पधारे हैं तो आदेश दीजिये। पंडितजी ने कहा- देखो भाई, हमारा वंशानुगत संस्कार होने से मेरा पेट मोटा है, पर फोटो में ऐसा मत कर देना क्योंकि मेरा शरीर तो चला जाएगा पर फोटो वर्षों तक रहेगी, जिसे आने वाली पीढ़ियाँ भी देखेंगी। ऐसा कहकर पंडितजी ने भी दक्षिणास्वरूप कुछ राशि चित्रकार के सम्मुख रख दी और चले गये। चित्रकार बेचारा माथा पकड़कर बैठ गया, कैसे बनाऊँ चित्र ? यदि इनके कहे अनुसार चित्र बनाऊँ तो सम्राट् कहेंगे- यह चित्र गलत है, यथार्थ का अंकन नहीं किया है। इससे सम्राट् खुश होने के बजाय दंड भी दे सकते हैं। इतने में सम्राट् का एक गुलाम आ गया। बोला- तुम्हारा काम तो अच्छा चल रहा है। चित्रकार ने कहा- अभी तो शुरू ही नहीं किया। उसने कहा- जल्दी करना अन्यथा सम्राट् नाराज हो जाएंगे। ''नादान की दोस्ती जी का जंजाल'', चित्रकार ने सोचा- जैसे नादान की दोस्ती जी का जंजाल होती है वैसे ही राजा की दोस्ती भी जंजाल बन जाती है। कहा भी गया है-

राजा, योगी, अग्नि, जल, इनकी उलटी रीत
बचते रहिये परशराम, थोड़ी पाले प्रीत॥

आप सोच लें कि अग्नि से मेरा प्रेम है और हाथ उसमें रख दें तो क्या होगा ? हाथ जल जाएगा। यदि कोई सोचे कि महासती सीता नहीं

PDF Compressor Free Version

जली थीं तो हमारे हाथ क्यों जलेंगे ? तो समझ लीजिये कि हमारे भीतर का भय हमें आग से जलाता है। चित्रकार के मन में भी भय संचरित होने लगा। कैसे बनाऊँ चित्र ? आखिर परेशान होकर वह सो गया। रात्रि में उसने स्वप्न देखा, जिसमें उसे समाधान मिल गया। सुबह उठा और हाथ में कूची लेकर चित्रफलक पर चित्र अंकित करने लगा। जब चित्र तैयार हो गया तो मन में विचार बना- यह कैसे हो गया ? कहाँ से उसे प्रेरणा मिली थी ? जिन विचारों में खोया, परेशान वह सोया था, शांति के क्षणों में उसे मस्तिष्क से दिशाबोध प्राप्त हुआ। कभी हम भी कह देते हैं- दैवी शक्ति से हुआ, पर हमारे मस्तिष्क में ऐसी शक्ति है। वहाँ से संकेत मिल सकते हैं, बशर्ते कोई लेने वाला हो।

चित्रकार ने एक सप्ताह में चित्र अंकित कर दिया और राजा से कहा- राजन् ! मैंने चित्र तैयार कर दिया है। राजा ने कहा- मैं देखना चाहता हूँ। चित्रकार ने कहा- चित्रशाला में ही पधारेंगे तो ठीक रहेगा। राजा पधारे। देखा, एक बड़े फलक पर चित्र बना है, किन्तु उस पर आवरण डाला हुआ है। राजा ने पूछा- इस पर कपड़ा क्यों डाला है ? चित्रकार ने कहा- गंदा न हो जाये, इसलिए डाला है। राजा ने कहा- हटाओ इसे। हटाया तो राजा चित्र देखते ही दंग रह गये क्योंकि उसने सम्राट् का चित्र वस्तुतः इतना भव्य बनाया था कि वे उसे देखते ही प्रफुल्लित हो गये। किन्तु जैसे ही उनकी दृष्टि सभा पर गई, वे आश्चर्यचकित हो गये और पूछ लिया कि यह क्या किया ? मेरा चित्र तो ठीक बनाया, पर सभा का चित्र कैसा बनाया है ? चित्रकार ने कहा- हुजूर ! क्या करूँ, जो व्यक्ति जैसा है वैसा वह दुनिया में दिखना नहीं चाहता। वह यथार्थ को नहीं, अयथार्थ को अंकित करवाना चाहता है, इसलिए मैंने सभी के चेहरों पर मुखौटे लगा दिये हैं। मुखौटे अलग होते हैं, व्यक्ति अलग होता है और इन सभासदों ने मेरे सामने जो विचार व्यक्त किये थे उनका ध्यान रखकर ही मुझे अंकन करना पड़ा। फिर उसने एक-एक की बात सम्राट् के सामने प्रकट कर दी, जिसे सुनकर वे प्रमुदित हुए और बोले- अरे ! तूने चित्र ही नहीं बनाया है, इसके साथ ही मुझे बहुत बड़ी शिक्षा भी दी है। सम्राट् ने एक हजार अशर्फियाँ उसे

PDF Compressor Free Version

चित्र बनाने के लिए व एक हजार अशर्फियाँ उसकी बुद्धिमत्ता के लिए प्रदान कीं।

हमें चिन्तन-मनन करना है कि उसने तो दरबारियों को सही अंकित किया, क्योंकि वे मुखौटे में जीने वाले थे, किन्तु हम तो धर्म-क्षेत्र में जीने वाले हैं। हम तो मुखौटों में नहीं जी रहे हैं। यथार्थ में यदि हमारा वास्तविक अंदर का रूप कुछ और हैं और हमारा ऊपर का दिखावा कुछ और है ऐसे में कल्याण नहीं होगा !

कैसे हो कल्याण, करणी काली है,
नहीं होगा भुगतान हुँडी जाली है।

यदि कोई जाली हुँडी लेकर आ जाये तो क्या आप स्वीकार कर लेंगे ? यदि कोई जाली चैक या नोट आ जाये ? यदि भूल से आ गया हो तो माथा ठोक लोगे, किन्तु यदि जान लोगे कि यह चैक या नोट सही नहीं है तो क्या करोगे ? नहीं लोगे न ? किन्तु इसका उल्टा भी होता है। आपको एक घटना सुनाता हूँ।

अहमदाबाद के एक सेठ के यहाँ एक ऐसी ही हुँडी आ गई। मुनीमों ने खाते-बही टटोले कि इस नाम से तो कोई लेन-देन नहीं है। वह हुँडी घूमकर वापस सेठ के पास आ गई। सेठ ने कहा- मुनीमजी डेढ़ लाख रुपये दे दीजिये। यह उस जमाने की बात है। आज के डेढ़ लाख तो कोई मायने नहीं रखते, पर उस समय के डेढ़ लाख मायने रखते थे। मुनीम ने कहा- लेकिन....। सेठजी ने कहा- मैंने कह दिया भुगतान कर दीजिये। मुनीमों ने पुनः सावधान किया- लेकिन उनका खाता नहीं है। सेठजी ने उत्तर दिया- खर्च खाते लिखकर भुगतान कर दीजिये। भुगतान कर दिया गया। वर्षों बाद वही सेठ अहमदाबाद पहुँचा। साथ में बैलगाड़ियों में धन - भरकर ले गया था और सेठ से कहा कि इतने वर्ष पूर्व एक ऐसी हुँडी आपके पास थी, उसका कोई लेन-देन नहीं था, किन्तु आपने उसका भुगतान किया था। मुनीम पुनः खाते टटोलने लगे कि उस नाम पर तो कोई पैसा बाकी था ही नहीं, लेकिन उसने कहा- आपने मेरी हुँडी स्वीकार की थी। हुआ यों था कि एक समय था जब उस सेठ की बहुत

PDF Compressor Free Version

चलती थी, करोड़ों का व्यापार चलता था। लेकिन जैसे करोड़पति को रोड़पति और रोड़पति को करोड़पति बनते देर नहीं लगती, कहाँ वे पांडव सम्राट् थे, किन्तु एक रात में पासा पलट गया और उन्हें वनवास के लिये बढना पड़ गया। उस सेठ की भी स्थितियाँ बदली थीं।

घटना यह थी। एक राजपूत के डेढ़ लाख रुपये एक सेठ के पास थे। वह आकर खड़ा हो गया– ''सेठ, तू मेरे पैसे खा नहीं पाएगा। सेठ, तुझे मेरे रुपये देने ही पड़ेंगे। तब सेठ ने कहा– मैं तुझे अहमदाबाद की अमुक पेठी पर हुँडी लिख सकता हूँ। राजपूत ने कहा– कोई बात नहीं, मुझे तो पैसे चाहिये। सेठ ने डेढ लाख की हुँडी काट दी और वह वहाँ पहुँच गई। सेठ ने कहा– मैंने किसी की हुँडी का भुगतान नहीं किया है। मैंने तो केवल 'दो मोती' खरीदे हैं। हुआ यह था कि जब हुँडी लिखी जा रही थी तब सेठ के दो आंसू के बिन्दु हुण्डी पर टपके थे। और जब मुनीम के हाथों से वह सेठ के पास पहुँची तो सेठ ने कहा– यह सामान्य हुँडी नहीं है। यह बहुत बड़े सेठ की इज्जत है, यह हुँडी लौटेगी नहीं। इसलिए उन्होंने कहा था– खर्च खाते लिखकर भुगतान कर दो। था न कलेजा सवा हाथ का ? आज स्थिति यह है कि करोड़ों से खेल करने की स्थिति हो तो अपने स्वार्थ के लिए कुछ भी करने को तत्पर हो जायेंगे, किन्तु कोई दुखी हो, उसके लिए तत्परता नहीं बन पाती है। यदि कोई प्रतिद्वंद्वी आपदा में फँसा है तो देव के सामने जाकर मनौती करेंगे कि मैं मावे की बर्फी चढ़ाऊँगा, यदि वह नीचे आ जाये। ऐसी मनौती करने से वह नीचे आये या न आये पर आप जरूर नीचे आ जाएँगे।

जब हिरोशिमा पर बम विस्फोट किये गये थे, तब एक व्यक्ति ने अमेरिका के राष्ट्रपति से जाकर पूछा था कि आपको कैसा लग रहा है ? तब उन्होंने कहा था– आज मैं आनंद की नींद सोऊंगा। ऐसी स्थिति में मानवता जिन्दा रह पाएगी क्या ?

मानवता की भव्य भूमि
पर बोल गये भगवान
मानव-मानव एक समान।।

PDF Compressor Free Version

विचार कीजिये कि यह हमारा केवल उच्चारण हो रहा है या ऐसा हमारा विचार भी है ! यह बात हम बड़ी सुरीली आवाज में बोल तो देगें, पर यह बात कहाँ तक सच है ? मुँह तक है या गले तक या हृदय तक भी पहुँची है ?

बन्धुओं ! पर्युषण पर्व की आराधना सहज बात नहीं है। मुँहपत्ती लगाकर सामायिक कर लेंगे, पर अंदर घाव भरे पड़े हैं। हमारा यदि घर के सदस्यों और नौकरों-चाकरों के साथ दुर्व्यवहार है तो सामायिक बन नहीं पाएगी, फलीभूत नहीं होगी। सुनी होगी आपने पूर्णिया श्रावक की कथा, जिसकी पत्नी बिना पूछे छाणा ले आई थी तो क्या सामायिक हो पाई थी ? मुँहपत्ती बांधकर बैठा जरूर, पर क्या मन में सामायिक हो पाई ? नहीं। तो क्या हमारी हो पायेगी ?

ये पर्व शिरोमणि आये हैं, जागिये । आप कहेंगे- हम सोये हुए कहाँ हैं ? हम तो जगे हुए हैं। बहुत अच्छी बात है। पर अन्दर झाँककर देखें, हमारा चेतन सोया हुआ है या जगा हुआ है ? यदि वह सोया हुआ है तो शैतान जागते रहेंगे। इन शैतानों को कब तक पालेंगे ? शैतान हैं- क्रोध, मान, माया, लोभ, मद, मत्सर। इन्हें पाल-पालकर सोचें कि हम तो बहुत अच्छा कर रहे हैं, तो यह गलत होगा। आपको मालूम होगा कि आतंकवाद का प्रादुर्भाव कैसे हुआ। स्वर्णमन्दिर परिसर में जो स्थिति बनी वह क्यों बनी ? यदि भिण्डरावाला को पाला नहीं गया होता तो यह दशा नहीं बनती। हम भी क्रोध, मानादि शैतानों को पालते हैं और फिर इनके लिए बहुत बड़ी कीमत चुकानी पड़ती है। हमारी एक जिन्दगी से उनकी कीमत नहीं चुकेगी; अनेक जिन्दगियों से कीमत चुकानी पड़ेगी। कुछ लोग ऐसा मानकर चलते हैं कि संतों की शरण में चले जायेंगे तो कल्याण हो जायेगा। पर ध्यान रखिये, जिसका अतंर शुद्ध नहीं, निर्मल नहीं, सरल नहीं, उसका कल्याण हो नहीं पाएगा, चाहे वह किसी भी संत की शरण में चला जाये। और तो क्या, भगवान महावीर की शरण में आने वाली आत्मा भी कुछ कर नहीं पाई। संगम भी शरण में आया था, हो गया उसका कल्याण क्या ? उसे सत्पथ भी नहीं मिल पाया, चाहे कितने भी जन्म बीते। पर्युषण पर्व आये हैं तो हम अंतर की धुलाई करें। अंतर की

PDF Compressor Free Version

धुलाई नहीं की तो स्वयं की पहचान नहीं कर पाएंगे। ऊपर-ऊपर की भ्रामक पहचान कर ही रह जाएंगे, जैसे उस चित्रकार ने मुखौटे दिखाये थे। मैं चाहता हूँ कि आपकी ऐसी फोटो लूं जिसमें यथार्थ उजागर हो जाये। उस पर लीपा-पोती का प्रयत्न न हो। यदि नीचे कचरा पड़ा है और कोई चाहे कि ऊपर गोबर से लिपाई कर स्वच्छ कर दूं, तो लिपाई हो नहीं पाएगी। पहले उसकी सफाई करनी होगी !

बन्धुओं ! पर्युषण पर्व के माध्यम से हम स्वयं की पहचान करें। गौतम राजकुमार ने अपनी पहचान की, घर पर आकर सबकुछ त्याग दिया और भगवान अरिष्टनेमि के पास पहुँचकर साधु जीवन स्वीकार कर लिया। फिर साधना करते हुए कर्मों का क्षय कर सिद्ध, बुद्ध, मुक्त होकर एवं सभी दु:खों को नष्ट कर परिनिवृत्त हो गये। हम भी अपने आन्तरिक भावों को शुद्ध करके जीवन को भव्य बनाने का प्रयत्न करें, जिससे मुखौटे लगाने की आवश्यकता ही समाप्त हो जाये। पर्युषण पर्व का यही संदेश है, हम इसे अपने जीवन में उतारें।

26.08.2000

❖ ❖ ❖

PDF Compressor Free Version

3. मन की गाँठें खोल

भगवान महावीर ने जीव का लक्षण बताते हुए कहा है-

णाणं च दंसणं चेव चरित्तं च तवो तहा।
वीरियं उवओगो य, एयं जीवस्य लक्खणं॥

(उत्तरात्ध्ययन सूत्र २८/११)

ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप, वीर्य और उपयोग, ये जीव के लक्षण हैं। ज्ञान के द्वारा व्यक्ति अपनी पहचान कर पाता है और दर्शन के द्वारा आत्म-अनुशासन की अवस्था प्राप्त होती है। इस आत्म-अनुशासन को ही हम सम्यक्दर्शन कह सकते हैं। आप कहेंगे अनुशासन तो मिथ्यात्वी व्यक्ति में भी पाया जाता है। यह ठीक है, उसमें अनुशासन हो सकता है, किन्तु आत्म-अनुशासन तो सम्यक्त्व की अवस्था के साथ ही घटित होता है। भगवान महावीर के चरणों में जो आत्माएँ पहुँचीं, उन्होंने प्रभु महावीर से निवेदन किया- ''भगवन ! हमने निर्ग्रन्थ प्रवचन सुना है। निर्ग्रन्थ प्रवचन का तात्पर्य है तीर्थंकर देवों की वाणी अर्थात् उन देवों की वाणी, जिनमें कोई ग्रंथि नहीं रह गई थी। न राग की ग्रंथि, न द्वेष की ग्रंथि। मूल ग्रंथियाँ दो ही हैं- राग और द्वेष की ग्रंथियाँ। अवान्तर ग्रंथियाँ हैं- क्रोध, मान, माया, लोभ, ईर्ष्या, डाह, भय, शोक आदि। ऐसी अनेक ग्रंथियाँ निर्मित हो जाती हैं। यदि मूल ग्रंथियाँ बनी रहती हैं तो दूसरी ग्रंथियों को भी बने रहने का अवसर मिल जाता है, परन्तु यदि मूल ग्रंथियाँ समाप्त हो जायें तो दूसरी ग्रंथियाँ भी लंबे समय तक रह नहीं पाती। जो इन ग्रंथियों से रहित है, उन्हें निर्ग्रन्थ कहा गया है।

संत-मुनिराज को भी निर्ग्रन्थ कहा जाता है, किन्तु यथार्थ में बिना वीतरागता के निर्ग्रन्थता घटित नहीं हो पाती। जब तक संज्वलन रूप कषाय भी मौजूद है तब तक पूर्णतया निर्ग्रन्थता घटित नहीं हो सकती क्योंकि अल्प रूप में ही सही, कषाय मौजूद रहता है। जैसे बाहुबलीजी

PDF Compressor Free Version

में अल्प कषाय रहते पूर्ण निर्ग्रन्थता घटित नहीं हुई। उन्होंने सोचा मैं पहले केवलज्ञान प्राप्त कर लूँ फिर प्रभु के पास जाऊँगा ताकि छोटे भाईयों को वंदन नहीं करना होगा और इतनी-सी ग्रंथि केवलज्ञान-केवलदर्शन को रोकने वाली बनी। अनुत्तर ज्ञान की अवरोधक बनी। जब तक छोटी-सी भी ग्रंथि पड़ी है तब तक पूर्णतया निर्ग्रन्थपणा वहाँ घटित नहीं हो पाएगा। तीर्थंकर देव सर्वात्मना अर्थात् पूर्णतया निर्ग्रन्थ होते हैं। किसी भी प्रकार की ग्रंथि नहीं, कोई लाग-लपेट नहीं, कोई भाई-भतीजावाद नहीं। यह भी नहीं कि यह मेरा अनुयायी है, तो इसे ऐसा कैसे कहा जाये ?

जब मगध सम्राट् श्रेणिक ने पूछा कि भगवन ! मैं मरकर कहाँ जाऊँगा ? तब इतने बड़े सम्राट् को अपना भक्त बनाये रखना है, ऐसा सोचकर भगवान ने उत्तर को घुमाया नहीं, बल्कि स्पष्ट कहा - राजन् ! तू सातवीं नरक के दलिक इकट्ठे कर चुका था, पर वदंना करने से छः नारकी के दलिक तो समाप्त कर चुका है, अब एक नारकी के दलिक बाकी हैं। इसलिए तू पहली नरक में उत्पन्न होगा।

सम्राट् कोणिक भी तीर्थंकर देव की भक्ति में तल्लीन था। उसने अनेक व्यक्तियों को केवल इसलिए नियुक्त कर रखा था कि वे भगवान महावीर के समाचार उस तक पहुँचाते रहें कि भगवान कब किस नगर में विराज रहे है; किधर उनका विहार हुआ है ? ऐसे सुख-साता के समाचार पाने के लिये उसने अनेकानेक व्यक्तियों को नियुक्त कर रखा था। उसने भी पूछा- भगवन्, मैं काल करके कहाँ जाऊँगा ? तो भगवान ने कहा- छठी नरक में। उन्होंने यह सोचकर कहीं कोई लाग-लपेट नहीं रखी कि यह मेरी भक्ति करने वाला है, इसलिए यह खुश हो, ऐसी बात कहूँ। यह है वीतरागता एवं निर्ग्रन्थता की पूर्णता की अवस्था। इसलिए तीर्थंकर देवों की सभा में जो श्रोता उपस्थित होते, तो उपदेश सुनकर उनके मुँह से सहज ही ये शब्द निकलते कि निर्ग्रन्थ प्रवचन ही अर्थ है, निर्ग्रन्थ प्रवचन ही सार हैं; निर्ग्रन्थ प्रवचन के अतिरिक्त जो कुछ भी है वह आत्मकल्याण में सहायक नहीं है। ऐसे निर्ग्रन्थ प्रवचन को सुनकर उपस्थित श्रोता कहते- हम इस प्रवचन पर श्रद्धा करते हैं, प्रतीति करते। आगार धर्म छोड़कर आपके अणगार धर्म धारण करना चाहते हैं और कई

PDF Compressor Free Version

ऐसे भी होते थे जो कहते थे- भगवन् ! बहुत-से राजा, सार्थवाह, गाथापति आपके चरणों में मुंडित होकर आगार धर्म से अणगार धर्म स्वीकार करते हैं, किन्तु मुझ में अभी इतना सामर्थ्य नहीं है कि मैं अणगार धर्म को स्वीकार कर सकूँ। इसलिए मैं आपके श्रीमुख से पाँच अणुव्रत, सात शिक्षाव्रत-रूप बारह प्रकार का गृहस्थ धर्म, श्रावक धर्म स्वीकार करना चाहता हूँ। उनकी विनय सुनकर प्रभु महावीर उत्तर देते- अहासुहं, देवाणुप्पिया, मा पडिबंध करेह। 'अहासुह', यह बात क्यों कही जाती है, इसके पीछे बड़ा गहरा विज्ञान है।

तीर्थंकर देवों का एक-एक शब्द, एक-एक पद अपना महत्त्व रखता है। रथ्यापुरुष की तरह उनका शब्द नहीं है। रथ्यापुरुष का तात्पर्य है- सड़क पर चलने वाला पुरुष। सड़क पर तो बहुत-से व्यक्ति चलते हैं, तीर्थंकर और संत भी चलते हैं, पर यहाँ तात्पर्य है 'सड़क छाप'। जो न आगे की सोचता है, न पीछे की। जैसा मन में आया वैसा मुँह से बोलता है। ऐसे पुरुष के कथन को रथ्यापुरुष का कथन कहा है। वह प्रामाणिक नहीं होता, ग्राह्य नहीं होता। यदि वह बहुत अच्छी बात भी कह रहा है तब भी अच्छी होते हुए भी वह ग्राह्य नहीं होती। वह प्रामाणिक नहीं होती। क्योंकि वह स्वयं उसके मर्म से अनभिज्ञ होता है।

तीर्थंकर देवों की वाणी, उनका एक-एक शब्द, उनकी देशना अपने-आप में प्रामाणिक होती है। चाहे उनके द्वारा साधारण शब्द भी कहा गया हो, तथापि उसके पीछे भी गहरा रहस्य छिपा होता है, आत्मा की अनुभूति होती है। उसी अनुभूति के आधार पर जब 'अहासुहं देवाणुप्पिया' उद्गार निकलता है, तब वह आत्म-अनुशासन का द्योतन करने वाला होता है। उसका अभिप्राय होता है कि तुम आत्म-अनुशासन में स्थित हो, अपना निर्णय तुम स्वयं कर सकते हो। जहाँ इस प्रकार की अवस्था में किसी प्रकार की न्यूनता होती थी, वहाँ प्रभु महावीर मौन साध लेते थे। जमाली से संबंधित प्रकरण इसका प्रमाण है। जमाली प्रभु महावीर का संसारपक्षीय जामाता था, जो अब मुनि बन चुका था। उसने एक बार भगवान के चरणों में उपस्थित होकर निवेदन किया- "भगवन ! आपकी आज्ञा हो तो मैं 500 शिष्यों को लेकर स्वतंत्र विचरण करना

PDF Compressor Free Version

चाहता हूँ।'' प्रभु महावीर ने उस समय मौन धारण कर लिया क्योंकि वे देख रहे थे कि आत्म-अनुशासन की नींव हिलने वाली थी और वैसा ही हुआ। जमाली शंकाग्रस्त हो मिथ्यात्व का वेदन करने लगा।

बन्धुओं ! संसार के व्यवहार में भी अनुशासन की बहुत बड़ी आवश्यकता होती है। कभी हम सोच लें कि धर्म हमें स्वतंत्रता की राह पर ले जाने वाला है, फिर वहाँ अनुशासन की आवश्यकता क्यों पड़ गई ? यहाँ आत्म-अनुशासन को बहुत महत्त्व दिया गया है क्योंकि जहाँ आत्म-अनुशासन नहीं है तो वहाँ का शासन आपको केन्द्रित करने वाला होता है। आप स्वयं अनुभव करते हैं कि जब प्रवचन पूर्ण होता है और आप चाहते हैं कि संतों का चरण-स्पर्श कर लें तब संतों की तो कोई कामना नहीं होती कि इतने-इतने व्यक्ति चरण-स्पर्श करें, पर आपकी भावना होती है। इसलिए संत बैठे रह जाते हैं और जब कई भाई एक साथ पहुँचने की कोशिश करते हैं तो स्वयंसेवकों को रोकना पड़ता है। यदि पहले ही आत्म-अनुशासन की अवस्था रहे तो किसी भी स्वयंसेवक को खड़े रहने की आवश्यकता नहीं हो।

अनुशासन की आवश्यकता हर क्षेत्र में रहती है, भले ही वह धार्मिक क्षेत्र हो। अनुशासन-विहीन व्यवस्था हो तो धर्मक्रिया बन नहीं पाएगी। अनेक तरह के अनुशासन तीर्थंकर देवों ने बताये हैं। अकेले साधु का कल्प नहीं है। साध्वी विचरण करे तो कम से कम कितनी होनी चाहिये, इसका भी प्रावधान किया गया है। कम से कम तीन साध्वियाँ होनी चाहिए। यदि उनका 3 का सिंघाड़ा है और उनमें से एक कालधर्म को प्राप्त हो जाये और पीछे दो रह जायें तो किसी एक विश्वस्त बहिन के साथ निकटवर्ती क्षेत्र में, जहाँ साध्वियाँ विचरण करती हैं, उनके समीप पधार जाना चाहिए। वे एक या दो रात से अधिक बीच में रुकें नहीं, यह कल्पमर्यादा भी तीर्थंकर देवों ने बताई है, यह भी एक अनुशासन है। ऐसी एक नहीं, अनेक मर्यादाएँ संत जीवन में होती हैं।

देवकी महारानी के छः पुत्र, जो सुलसा के घर पले थे, वे दो-दो के सिंघाड़ेपूर्वक आहार के लिए परिभ्रमण करते हुए देवकी के घर में

PDF Compressor Free Version

पहुँच गये। देवकी महारानी के मन में एक विकल्प जागृत हो गया- क्या कारण है, ये मुनि पुनः-पुनः मेरे ही घर में प्रवेश कर रहे हैं ? यह मेरा सौभाग्य है कि मेरे घर में संत पधार रहे हैं। उसने तीनों बार भिक्षा बहराई, पर तीसरी बार विचार किया कि मन की शंका को, मन की ग्रंथि को खोल लेना चाहिए। यदि इस ग्रंथि, मन की शंका को दूर नहीं किया गया तो उचित नहीं होगा। नीतिकार भी कहते हैं-

''संशयात्मा विनश्यति !''

यहाँ विनाश का अर्थ क्या है ? क्या आत्मा समाप्त हो जाती है ? एक तरफ कहा है- आत्मा शाश्वत होती है, विनष्ट नहीं हो सकती और दूसरी तरफ कहा जा रहा है- ''संशयात्मा विनश्यति।'' यहाँ विनाश का अर्थ है वह अपने आत्मगुणों को समाप्त करने वाली होती है। उसके भीतर जो ज्ञान-दर्शन आदि गुण रहे हुए हैं, जिनके माध्यम से उसके मौलिक स्वरूप की पहचान हो सकती है, वे गुण तिरोहित होते हैं। जब वह पहचान की क्षमता ही विनष्ट हो जाये कि मैं जीव हूँ या क्या हूँ तो उस आत्मा के होने, न होने से क्या फर्क पड़ता है ! इसलिए देवकी महारानी ने विचार किया कि मुझे संशय नहीं रखना चाहिये। उसने पूछ लिया संतों से- ''क्या कृष्ण वासुदेव के राज्य में लोगों में धर्म की श्रद्धा लुप्त हो गई है, जिसके कारण आपको पुनः-पुनः तीसरी बार एक ही घर में भिक्षा के लिए प्रवेश करना पड़ा ?'' इससे एक बात स्पष्ट हो जाती है कि साधु को एक ही घर में पुनः-पुनः भिक्षार्थ प्रवेश नहीं करना चाहिये। इसके पीछे कई कारण हैं। व्यावहारिक दृष्टि से देखें तो पुनः-पुनः प्रवेश से गृहपति के मन में शंका व्याप्त होगी कि क्या कारण है कि मेरे घर में बार-बार प्रवेश कर रहे हैं ? और यदि कभी मोह भावना जग जाये तो वह भी ठीक नहीं।

एक मुनिराज किसी गृहस्थ के घर में भिक्षा ले रहे हैं, बहिन भी भावना से बहरा रही है। मुनि के मन में उतार-चढ़ाव आ गया। बहिन धार्मिक जीवन से ओत-प्रोत थी, पूछ लिया- क्या बात है ? मुनि ने भी सरल भाव से स्वीकार कर लिया और कहा कि मेरे मन में कुछ

PDF Compressor Free Version

पूर्व की स्मृति जागृत हो गई। मैं सोचने लगा कि मैं जिस धर्मपत्नी का त्याग करके आया हूँ, उसके व तुम्हारे हाव-भाव लगभग एक समान हैं, इसलिए तुम्हें देखकर मुझे अपनी धर्मपत्नी का स्मरण हो आया। मैं उसी स्मृति में खो गया था। देखिये- संत-जीवन है, किन्तु फिर भी यह स्थिति बन जाती है और उसी संत की बनी हो, ऐसी बात नहीं है। चरमशरीरी आत्मा रथनेमि ने महासती राजमती को देखा और उसे आमंत्रित करने लगे- हे सुभगे ! यह मनुष्य-तन मिला है, पहले भुक्तभोगी हो जायें, संसार के कामभोग भोगकर फिर साधु बन जाएँगे। कर्मों का उदय किस-किस प्रकार से आता है, यह देखिये। उत्कृष्ट वैराग्य से साधु बनते हैं, पर एक समय ऐसा आता है जब भोगावली कर्म का उदय होता है तो वे भोग-याचक बन जाते हैं। ऐसी घटनाएँ होती हैं, इसलिए साधु को पुनः-पुनः गृहस्थ के घर में प्रवेश नहीं करना चाहिये और इसी कारण एक स्थान पर अधिक समय तक रुकना भी नहीं चाहिये। इसीलिये मर्यादा बनाई गई है कि चातुर्मास के अलावा साधु को 29 रात्रि से अधिक एक स्थान पर नहीं रुकना चाहिये, क्योंकि अधिक रुके तो मोह बन सकता है। कहा भी है- ''नेहपाशा भयंकरा''- स्नेह का पाश - बन्धन भयंकर होता है, आत्मा एक बार उसमें बंध जाए तो न जाने कितने भवों में आत्मा को भटकना पड़े। इस पाश में न बंधें।

देवकी महारानी के मन में प्रश्न उठा, उसने विचार किया कि मुझे समाधान कर लेना चाहिये। मुनि समझ गये कि आज तीनों सिंघाड़े यहाँ पहुँच गये हैं। वे मुनि समाधान करते हैं कि जो पहले आये थे, वह हम नहीं हैं। हम दूसरे हैं। जो पहले आये थे, वे दूसरे थे। हम छहों भाई हैं। नाग गाथापति की भार्या सुलसा हमारी माता है। हम दो-दो के सिंघाड़े से भिक्षा के लिए निकले थे। संयोग ऐसा बना कि तीनों तुम्हारे घर पहुँच गए। महारानी का समाधान हो गया। इससे ज्यादा समाधान या लम्बी-चौड़ी चर्चा वहाँ नहीं की गई और जो पूछा गया उसका संक्षिप्त उत्तर दे दिया गया। गृहस्थ के घर समाधान देने की स्थिति बने तो वहाँ संक्षिप्त समाधान दिया जा सकता है। इससे अधिक चर्चा वहाँ नहीं होनी चाहिये। यदि अधिक चर्चा करनी है, तो जहाँ संत विराजे हैं, वहाँ पहुँचकर समाधान

PDF Compressor Free Version

लिया जा सकता है, पर हर समय, हर स्थान पर नहीं। देवकी का समाधान हो गया था।

बंधुओ ! आज यदि संत कभी भूल से पहुँच जायें और पहले दिन भिक्षा की हुई हो और पहुँच गये हों या दूसरे संत पहुँच गये तो वे सोचते हैं कि हमें अवसर मिला है, इसलिए दान देने की स्थिति में आ जाते हैं। यदि संत पूछ लें तो कई तो कह देते हैं कि फरसा हुआ है, लेकिन कई कह देते हैं- याद नहीं है, शायद कल तो नहीं आये होंगे। लेकिन ऐसा नहीं होना चाहिये। स्पष्ट बात कहने वाला धर्म के नियमों का पालन करवाने वाला होता है। धर्म-नियमों के पालन में साधु-साध्वी तो एक-दूसरे के सहयोगी होते ही हैं, वैसे ही श्रावक भी सहयोगी बन सकते हैं। पर आज के युग में क्या चाहते हैं- संत की मर्यादा रहे या न रहे ? वे चाहते हैं- महाराज युग बदल रहा है यदि आप नहीं बदलेंगे तो धर्म का प्रचार नहीं कर पाएंगे। समझ नहीं आ रहा है कि हम धर्म को किस रूप में समझ रहे हैं। क्या धर्म कपड़ों के रूप में है ? जैसे आप कपड़े बदलते हैं वैसे ही क्या धर्म में भी परिवर्तन होना चाहिए ? यदि होता है तो हम अपनी मूल संस्कृति को खो बैठेंगे। मूल को छोड़कर आप पत्र, फूल, टहनियों को कितना भी सिंचन दें, कुछ प्राप्त नहीं होना है। प्रचार के युग में धर्म को परिवर्तित कर दिया तो आने वाले समय में आप अपनी संतानों को साधु-जीवन का स्वरूप नहीं बता पाओगे। यदि शास्त्रों के आधार पर कोई बताएंगे भी तो आने वाली पीढ़ी कहेगी-''क्या इस प्रकार का कोई आचरण कर सकता है ? यदि कर सकता है तो एक भी साधु बता दीजिये, हम मान लेगें कि ऐसा हो सकता है।'' तब आप क्या कहेंगे ? आप कहेगें- भाई ! साधु-जीवन है तो ऐसा ही, पर प्रचार की हवा ने उन सबको परिवर्तित कर दिया है। इसीलिए आज तो ऐसा साधु नहीं है। बच्चों को विश्वास नहीं होगा, वे कहेंगे- आपकी बातें सच्ची नहीं हैं, ये गप्पें है, यथार्थ नहीं।

सेठ तोलारामजी भूरा ट्रेन से यात्रा करके आचार्यदेव श्री नानेश के दर्शन करने छत्तीसगढ़ जा रहे थे। ट्रेन में कई ऐसे भाईयों से संपर्क हुआ जो जैन मुनियों के बारे में नहीं जानते थे। परस्पर वार्त्ता चली कि

PDF Compressor Free Version

आप कहाँ जा रहे हैं ? तो उन्होंने कहा- मैं अपने धर्मगुरु के दर्शन करने जा रहा हूँ। उन व्यक्तियों ने पूछा- वे कैसे हैं ? कैसा है उनका स्वरूप ? वे शास्त्रों के जानकार भी थे, उसी के आधार पर उन्होंने साधु-जीवन की चर्या बतलाई। पाँच महाव्रतों का संक्षिप्त स्वरूप बताया। इस पर वे श्रोता कहने लगे- क्या इस प्रकार का आचरण करने वाला मानव हो सकता है ? और ऐसी अवस्थाओं का आचरण करने वाले क्या जिन्दा रह सकते हैं ? तोलारामजी ने कहा- जिन्दा हैं, तभी तो दर्शन करने जा रहा हूँ। और आज यदि आपसे पूछ लिया जाये कि आप धर्मगुरु के दर्शन करने जा रहे हैं तो बताइये उनका स्वरूप क्या है। तो आप बगलें झांकने लगेंगे। खेद की बात है कि हमें मूल परम्परा का भी पता नहीं है। आपको ज्ञात नहीं साधु की मर्यादा। आपको पता नहीं कि आचार क्या है ? और यदि कोई आचार का पालन करे तो वहाँ छींटाकशी करेंगे। नुक्ताचीनी करेंगे और कहेंगे कि ये नये-नये कानून कब से चालू हो गये ? लेकिन ऐसे लोग कानून पढ़ते कब हैं ? पढ़ें तो जानें। मेरे ख्याल से बहुत कम व्यक्ति होंगे जो भारत के कानून को जानते होंगे। चिन्तन करने की बात है कि भारत में रहने वाले इतने कम व्यक्ति ही भारत के कानून को जानते हैं। इन छोटे-छोटे नियमों की और बहुत-से कानूनों की जानकारी तो हमें नहीं होती, किन्तु हम जिस देश में, धर्म-संस्कृति में जीते हैं, उसका ज्ञान तो हमें होना ही चाहिये।

साधुओं को आप वंदन-नमस्कार करते हैं। कई लोग माता-पिता के चरणों में भी माथा नहीं झुकाते, वे भी धर्मगुरुओं को माथा झुकाते हैं। परन्तु यदि रीति-नियमों का ज्ञान नहीं, वंदन किसको करना यह भी ज्ञान नहीं और सिर झुकाते रहें तो कुछ प्राप्त नहीं कर पाएंगे। निशीथ भाष्य में स्पष्ट कहा है कि जो पासत्था, कुशीला, स्वच्छंदी है, ऐसे को यदि कोई वंदन-नमस्कार करता है तो वह आत्मशुद्धि करने वाला नहीं है। प्रश्न पूछ लिया- कोई बात नहीं, आत्मशुद्धि नहीं होगी, किन्तु पुण्यबंध तो हो जायेगा तो प्रत्युत्तर मिला- उसके कायक्लेश होगा। प्रतिप्रश्न हुआ- ''कोई बात नहीं संसार के बहुत-से कार्यों में कायक्लेश होता है। इसलिए व्यवहार तो रह जाएगा और तो कोई नुकसान नहीं है ? तो

PDF Compressor Free Version

कहा गया- पुण्यबंध का लाभ तो नहीं, किन्तु नुकसान यह होता है कि उन साधुओं की भावनाओं को बढ़ोतरी मिलती है और ऐसे साधुओं को वंदन किया तो प्रायश्चित्त आता है। इस प्रकार लाभ तो कोई नहीं होता, वरन् नुकसान होता है। यथाप्रसंग पार्श्वस्थ आदि के स्वरूप को भी स्पष्ट कर देता हूँ। पार्श्वस्थ अर्थात् जिसने त्याग-नियम-मर्यादा को वस्त्र की तरह उतारकर पार्श्व में, किनारे, रख दिया हैं, जो पोशाक पहनकर तो चल रहा है, पर उसके जीवन में त्याग- नियम-मर्यादा नहीं है, जो स्वंच्छदी है अर्थात् जो तीर्थंकर देवों के शास्त्रों के आधार पर साधु-जीवन स्वीकार तो करता है, किन्तु कालान्तर में शास्त्रों की बातों से असहमति भी प्रकट करने लगता है। कहता है- वह युग और था, आज के युग में इनमें अटके रहें तो समाज पिछड़ जायेगा; और जो आकाश में उड़ानें भरने, गाड़ियों में चलने को तैयार हो जाएंगें; मनमाने नियम बनायेंगे, ऐसे साधुओं को स्वच्छंदी कहा है। ऐसों को वंदन-नमन किया तो वह वंदन संसार में भटकाने वाला होगा। संसार को सीमित करने वाला नहीं। इस प्रकार जो वंदन संसार को सीमित करने वाला होना चाहिये वही संसार को बढ़ाने वाला बन सकता है। इसलिए जिन्हें वंदन-नमन करना है, उनके स्वरूप का ज्ञान होना चाहिए।

देवकी महारानी ने मुनियों से प्रश्न पूछ लिया और मुनियों ने भी उसे गलत नहीं समझा। देवकी ने भी ऐसी गलती नहीं की कि मुनियों से न पूछकर घर-घर में पूछती फिरती कि क्या मुनि एक घर में बार-बार आ सकते हैं ? मेरे घर तो तीन बार आये थे। किन्तु उसने ऐसा नहीं करके मुनि से ही पूछ लिया। परिणामस्वरूप उसका समाधान हो गया। यह बात अलग है कि फिर कोई नई जिज्ञासा पैदा हो गई कि अतिमुक्त मुनि ने मुझे कहा था कि भरत क्षेत्र में तुम्हीं ऐसी माता बनोगी जो नलकुबेर के समान 8-8 राजकुमारों को जन्म दोगी। पर मैं यह अंतर स्पष्ट देख रही हूँ। एक ही माता के छः पुत्र हैं। ऐसा कैसे हुआ ? क्योंकि कहा है-

जो भाखे वर कामणी, जो भाखे मुनिराज।

PDF Compressor Free Version

शीलवती नारी, जिसका जीवन संयमित है, वह यदि कोई शब्द मुँह से निकाले तो वे अन्यथा नहीं होते। इसी प्रकार मुनिराज जो कथन करते हैं वे अन्यथा नहीं होते। अतिमुक्त मुनि आत्मसाधक हैं और साधना करते हुए जो तथ्य जाना उससे मुझे अवगत कराया तो उसमें भ्रांति कैसे हो सकती है ? उसने सोचा- मैं इतनी चिन्ता क्यों करूँ, क्यों नहीं भगवान अरिष्टनेमि, जो पहुँचे हुए हैं, उनसे ही समाधान कर लूं ? यह है आत्म-अनुशासन की अवस्था कि बाजार में बात न करते हुए मुनियों के चरणों में पहुँचने का निर्णय लिया। आपने सुना है कि उन्हें कैसा समाधान दिया। हमारे भीतर भी वह सम्यक्दर्शन प्रकट हो जाये तो फिर देखिये जीवन की क्या दशा बनती है।

आपने ड्रिलिंग मशीन देखी होगी जो छेद करती है। यदि ट्यूबवेल लगाना हो तो वह मशीन नीचे उतरती है; मिट्टी व पत्थरों की काट-छांट करती है; कचरा निकालकर फेंकती है और जहाँ शुद्ध पानी है वहाँ पहुँचा देती है। इस प्रकार गहरे में रहे हुए शुद्ध जल तक पहुँचा देती है और बीच के कूड़े-कचरे को अलग कर देती है। वैसे ही सम्यग्दर्शन मिथ्यात्व के कचरे को हटाकर, शांत सुधारस के दरिये तक पहुँचा देता है और बीच में आने वाले घातीकर्म की घाटियों को समाप्त करने वाला होता है। इसलिए ऐसी ड्रिलिंग मशीन को अपने भीतर फिट कर लो तो फिर ग्रंथि रह नहीं पाएगी और ज्योंही मूल ग्रंथि को काट लेते हैं तो जैसे मशीन के द्वारा मिट्टी को निकालकर पानी तक पहुँचते हैं, वैसे ही आप ग्रंथि-विमोचन से शांत सुधारस को उपलब्ध कर पाएंगे।

है पर्युषण जयकार, प्यारे जीवन में।
मन की गाँठें खोलो रे भाई, राग-द्वेष की कर दो विदाई,
मैत्री भावना धार, प्यारे जीवन में॥ 1॥
तपस्या से जीवन सरसाता, दिव्य तेज उससे प्रकटाता
मिले मोक्ष सुखकार, प्यारे जीवन में॥ 2॥
महावीर की अमृतवाणी, नाना गुरु कहे सुन रे प्राणी
आत्म 'राम' जयकार, प्यारे जीवन में.....॥ 3॥

बन्धुओं ! ये पर्व पर्युषण हैं, जिनमें हम उन महापुरुषों के जीवन

PDF Compressor Free Version

वृत्तान्त को सुन रहे हैं जिनके भीतर यदि कहीं गाँठें रही थी तो उन्होंने उन्हें खोलने का प्रयत्न किया। आज आप स्पष्ट बात सुन लीजिये, चाहे हम अपनी गाँठें आज खोलें या कल, यदि मुक्ति में जाना है तो इन्हें खोलना ही पड़ेगा। जब तक गाँठ बनी रहेगी, तब तक मुक्ति मिल नहीं पाएगी न ही पूर्ण आनंद का स्रोत हमारे भीतर प्रस्फुटित हो पाएगा। यदि वे ग्रथियाँ खुल गईं तो यहीं, इसी भूमि पर आपको मुक्ति नजर आ जायेगी। मुक्ति में जाना बाद में होगा, किन्तु जैसे आप टी.वी. के पर्दे पर घर बैठे देख-सुन लेते हैं कि दिल्ली की पार्लियामेंट में क्या हो रहा है, वैसे ही यदि मन की गाँठें खोल लीं, सम्यग्दर्शन से नयन-पट खोल लिये तो केवलज्ञान के पर्दे पर विश्व की हर घटना का आपको बोध हो सकेगा। आप यहाँ पर रहते हुए ही अनंतानंत सिद्धों को देख लोगे कि वे किस रूप में विराजमान हैं। कई भाई पूछते हैं- ज्योति, ज्योति के रूप में कैसे विराजमान हैं ? इस संदर्भ में यह कहा जा सकता है कि अरिहंतों के लिए यह विषय अनुभूति का है। हमारे लिए यह विषय श्रुति का है। अरिहंतों ने जैसा बताया वैसा जनता के बोध के लिए कहा जाता है। जैसे एक हॉल में हजार पॉवर का बल्ब जल रहा है। उसी हॉल में दूसरा एक बल्ब और हजार पॉवर का जल जाये तो पहले वाले बल्ब के प्रकाश में दूसरे बल्ब का प्रकाश समाविष्ट हो जाता है। इसी प्रकार तीसरा, चौथा आदि बल्ब जल जायें तो उनका प्रकाश हॉल में समा जाता है। वैसे ही सिद्ध भगवान ज्योत में ज्योत के रूप में विद्यमान हैं। यदि हम चाहते हैं कि हमारे भीतर भी वह शक्ति जागृत हो जाय कि हम यहाँ बैठे हुए सिद्ध भगवान को देख लें तो उसके लिए पहली शर्त है कि उस गाँठ को खोल लें जो चाहे क्लेश की हो, चाहे धन-सम्पत्ति की हो। चाहे किसी और की हो, जब तक टेढ़ापन रहेगा तब तक तो सिद्ध का स्वरूप नहीं देख पाएंगे। यदि मुक्ति पानी है, तो मन की गाँठें खोलो। मनुष्य-तन प्राप्त करके अब भी न जगे तो कब जगेंगे ?

चेतन चेतो रे, दस बोल जगत् में दुर्लभ मिलिया रे।
चेतन चेतो रे.....।
चार गति में गेंद दड़ी ज्यूं, गोता बहुला खाया रे...।

PDF Compressor Free Version

दड़ी खेली है कभी ? जैसे गेंद कभी ऊपर और कभी नीचे जाती है, उसी तरह हम भी इधर-उधर डोलते रहे हैं, लेकिन अभी भी मन नहीं भरा, विचार कीजिये कि इस संसार में क्या-क्या नहीं घटित हो जाता है। आज जो मित्र हैं, वे ही कल गला काटने के लिये तत्पर हो जाते हैं। आज जिन्हें अपना समझते हैं, पलक झपकते ही वे क्या हो जाते हैं ? कहते हैं कि जोधपुर नरेश जसवंतसिंहजी ने एक पोशाक बनवाई कि यह पोशाक मुझे श्मशान यात्रा में पहनायी जाये। बहुत बड़ी कीमत से तैयार की गई उस पोशाक को देखकर महाराज ने मन में चिन्तन किया कि मैं जरा इसकी परीक्षा तो कर लूं कि आने वाले समय में जो अपने कहलाने वाले हैं, वे मेरे रहेंगे या नहीं ? और तो क्या, आपके अपने रक्त व शक्ति से जो संतान पैदा हुई है, क्या वह भी आपकी रहेगी ? और तो क्या कहें, आज की संतान तो माता-पिता पर हाथ उठाने को भी तैयार हो जाती है।

आचार्यदेव विचरण करते हुए एक गाँव में पधारे। जब विहार करने लगे तो भाई पहुँचाने आये। एक भाई ने 12-13 वर्ष के लड़के के लिए कहा- महाराज ! इसे साथ ले जाओ। गुरुदेव सोचने लगे कि बड़े शहर में तो फिर भी संतों का संयोग मिलता है जिससे कि भाव जग जायें। पर गाँव में रहने वाले को, जहाँ वर्षों में एकाध बार संयोग मिलता हो, वहाँ पर ऐसे भाव कैसे जग गये ? पूछ लिया- भाई ! बात क्या है ? उस भाई ने कहा- म.सा. क्या बताऊं, यह 12-13 वर्ष का है, पर बड़ा उद्दण्ड है। जब इसे गुस्सा आता है तब यह कुछ भी नहीं देखता। कपड़े धोने का सोटा उठाकर अपनी माँ को पीट देता है और मुझे भी नहीं छोड़ता। गुरुदेव ने कहा- भाई ले तो जाऊँगा, पर यह बताओ, यह सीखा कैसे ? तुम पति-पत्नी तो कभी लड़ते नहीं ? उसने कहा- जब इसका जन्म भी नहीं हुआ था, मैं इसकी माँ को पीट देता था। देखिये! वे ही संस्कार उसे मिल गये थे। आप सोचते हैं कि बच्चा अबोध है, क्या समझता है। किन्तु मत भूलिये कि गर्भ में रहते हुए भी वह घर की हरकतों को जान लेता है और वे संस्कार उसमें जमते जाते हैं और दुनिया में आता है तो उन्हीं हरकतों में ढलता जाता है। फिर कहें कि यह मेरा कहना नहीं मानता। जैसा आपने बोया है, वैसा ही फल मिलेगा। बबूल बोया है तो आम नहीं मिलेगा। बच्चे को संस्कारित करने से पहले स्वयं को संस्कारित होना होगा। संत-चरण से ऐसे

PDF Compressor Free Version

बच्चे भी सुधर सकते हैं, कोई बड़ी बात नहीं है। इतिहास प्रसिद्ध अंगुलीमाल एवं रोहिणेय जैसे व्यक्ति भी संत-चरण में पहुँचकर सुधर गये थे। पर बात है समय पर संतान भी पराई हो जाती है।

मैं बता रहा था महाराजा जसवंतसिंहजी ने परीक्षा की। श्वांस कपाल में चढ़ा लिया। राजकुमार, मंत्री सब इकट्ठे हो गये। मंत्री ने कहा- अंतिम यात्रा के लिये महाराज ने एक पोशाक बनवा रखी है, वही पहिनाई जानी चाहिये। मंत्री के आग्रह पर वह पोशाक लाई गई। जैसे ही उसे खोला गया, राजकुमार उस पर मुग्ध हो गया। उसने कहा- मंत्रीप्रवर, इतनी कीमती पोशाक ऐसे ही क्यों बर्बाद की जाये ? महाराज को कोई भी पोशाक पहनाई जाये, वह साथ तो जायेगी नहीं। इसलिये इसे तो सुरक्षित रखना चाहिये। मैं अवसर पर इसका उपयोग कर लूंगा। अंततोगत्वा वह पोशाक पहनाने का विचार त्याग दिया गया। देखिये बंधुओ ! व्यक्ति कैसे भ्रम में रहता है कि मेरे हैं, अपने हैं, पर वस्तुतः कोई किसी का नहीं होता, सब मतलब के होते हैं। महाराज जसवंतसिंह भी समझ गये कि जब तक आँखें खुली हैं तभी तक सब अपने हैं, आँखें बन्द हुई कि सब पराये हो जाते हैं।

तो बंधुओ ! संसार की वास्तविकता को समझिये। यहाँ न कुछ अपना है, न कुछ स्थायी है। इसलिये ज्ञान के द्वारा अपनी पहचान करके आत्मानुशासन की अवस्था प्राप्त कीजिये। याद रखिये कि इसके लिये सम्यक्त्व की अवस्था बहुत आवश्यक है। पर्युषण पर्व का लाभ उठाने के लिये आप एकत्र होते हैं, यह अवसर आत्मोद्धार का भी है। आप निर्ग्रन्थ प्रवचन सुनते हैं तो पहला काम यह कीजिये कि अपने अंतर की ग्रंथियों को भी खोल डालिये। सबसे पहली ग्रंथि तो यह खोलिये कि इस भ्रामक विचार को दिमाग से निकाल दीजिये कि समाज में कोई बड़ा-छोटा होता है। आत्मा के स्तर पर तो सब बराबर हैं ही, फिर पता नहीं कि जिसे हम छोटा समझ रहे हैं, उसमें कितनी उदारता हो और वह कितना प्रेम करने वाला हो, जबकि जिसे हम बड़ा समझ रहे हैं वह कितना आत्मकेन्द्रित, स्वार्थी और कठोर हो। आप सब समाज की जाजम पर साथ-साथ बैठे हैं, यही प्रवृत्ति जीवन में भी रहनी चाहिये।

PDF Compressor Free Version

मैं आपको एक बात बता दूं। आज व्यक्ति असंतुष्ट और दु:खी इसलिये नहीं है कि उसके पास साधन कम हैं। वह असंतुष्ट और दु:खी इसलिये है कि उसने ग्रंथियाँ बाँध रखी हैं। इन्हीं को काम्प्लेक्सेज (Complexes) या कुण्ठाएँ भी कहते हैं। ये कुण्ठाएँ हमें शांति से जीने नहीं देतीं, तनाव पैदा करती रहती हैं और मनुष्य इन्हीं के कारण मनोरोगों का शिकार हो जाता है। आपको पैसे वाले और सम्पन्न लोगों में ये कुण्ठाएं ज्यादा मिलेंगी। वे ही तनाव और हताशा, जिसे डिप्रेशन (Depression) कहते हैं, उसका शिकार हो जाते हैं। पैसा और सम्पन्नता उन्हें सुख-शांति नहीं दे पाती। यह तो सम्पन्नता और विकास की अंधी होड़ के कारण बंधने वाली ग्रन्थियों की बात हुई। इसी प्रकार की ग्रन्थियाँ भावनात्मक एवं व्यावहारिक जीवन में भी बंधती रहती हैं। ऐसी ग्रंथियाँ पारिवारिक जीवन की सुख-शांति नष्ट कर देती हैं। यहीं धर्म, अध्यात्म और संत-समागम की महिमा की बात आती है, क्योंकि इनका सेवन किसी भी प्रकार की ग्रंथियों को बनने ही नहीं देता। यह मन को इतना ऋजु, बुद्धि को इतना निर्मल और चिन्तन को इतना सरल बना देता है कि विचारों की रस्सी घूमती ही नहीं, इसलिये गाँठ लगने की स्थिति ही उत्पन्न नहीं होती।

पर्व पर्युषण के इस शुभ अवसर पर आप भले ही कुछ और न करें, पर यह तो अवश्य करें कि अपने मन को निर्मल और चिन्तन को सरल बनाये रखने का संकल्प ले लें। मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि नई कोई ग्रन्थि तो बनेगी ही नहीं, पहले की लगी हुई कोई ग्रंथियाँ हैं तो उनके खुलते जाने की स्थितियाँ बन जायेंगी। आप निर्ग्रन्थ प्रवचन सुन रहे हैं तो इतनी प्रेरणा तो आप ग्रहण कर ही सकते हैं कि अपने मन को सरलता और निर्मलता की तरफ मोड़ने के लिए तैयार हो जायें। इतनी शुरुआत ही बहुत है। यह बीज है जो कालान्तर में उस बड़े वृक्ष के रूप में विकसित होगा, जिसकी ठण्डी छाया में बैठकर आप जीवन को ताप और थकान से मुक्त कर पायेंगे। यही तो धर्म-श्रवण का फल होता है। आप इसके अधिकारी बनें, यही कामना।

27.08.2000

❖ ❖ ❖

PDF Compressor Free Version

4. इच्छाओं का कर ले अन्त

भगवान महावीर ने अपनी देशना में जो जीवन-सूत्र प्रस्तुत किये हैं वे मनुष्य को परमगति प्राप्त कराने की दृष्टि से अनुपम हैं। मोक्ष प्राप्ति के उपायों की चर्चा करते हुए उन्होंने कहा है-

नाणं च दंसणं चेव चरित्तं च तवो तहा।
वीरियं उवओगो य एयं जीवस्स लक्खणं॥

(उत्तराध्ययन28 11)

ज्ञान, दर्शन, चरित्र, तप, वीर्य और उपयोग जीव के लक्षण हैं। इनकी हम विवेचना कर लें।

जब तप जीव का लक्षण है तो उसकी आवृत्ति प्रत्येक जीव में होनी चाहिये, पर क्या सभी जीव तपस्वी हैं ? क्या सभी तपस्या करते हैं ? आप विचार में पड़ जाएंगे कि क्या सभी जीव तपस्वी नहीं हैं ? सत्य तो यह है कि साधु-साध्वी भी सभी तपस्वी नहीं हैं, सभी के साथ तपस्वी विशेषण, नहीं लगते हैं। यदि सभी तपस्वी हैं तो किसी के साथ तपस्वी विशेषण लगाना किसी के साथ नहीं लगाना, ऐसा क्यों ? बंधुओ ! विचार कीजिये, तप जीव का लक्षण है और प्रत्येक जीव में वह पाया भी जाता है। कैसे पाया जाता है, इसे समझें।

तप निर्जरा का भेद है और संसार में ऐसी कोई आत्मा नहीं जो प्रतिपल-प्रतिक्षण निर्जरा नहीं करती हो और न ही ऐसा कोई जीव है जो प्रतिक्षण-प्रतिपल भोजन ही करता हो। यह बात अलग है कि कोई त्यागपूर्वक आहार छोड़ता है और कोई आहार न मिलने से छोड़ता है। ऐसा भी होता है कि किसी का पेट भर जाये, भूख या रुचि नहीं हो तो कितने ही घंटों का अन्तराल भी आहार के बीच पड़ जाता है। पर यह निश्चित है कि निरंतर आहार कोई नहीं करता। आहार छूटता रहता है। दूसरे शब्दों में सोचें, आहार ग्रहण करना या छोड़ देना, ये ही तप नहीं है। तप की परिभाषा करते हुए कहा गया है-

PDF Compressor Free Version

''इच्छानिरोधस्तपः''।

अर्थात् इच्छाओं का निरोध तप है। हमारी इच्छाएँ बलवती होती रहती हैं। पर ऐसे भी क्षण होते हैं, जिनमें हम किसी प्रकार की इच्छा न करते हों, इसलिए इस तप की आवृत्ति जीव मात्र में रही हुई है। हम जितनी इच्छाओं में दौड़ते हैं उतने ही 'स्व'भाव से अलग होते हैं, दूर होते हैं। यदि अपने 'स्व'भाव को प्राप्त करना है तो इच्छा को छोड़ना त्यागना होगा। इच्छा छोड़ना, त्यागना यह अलग बात है, पर ऐसी अवस्था बने कि इच्छा जगे ही नहीं। पर इससे पहले सोचें कि इच्छा का जागरण क्यों होता है ?

उत्तराध्ययन सूत्र में इस बात का संकेत किया है कि 'जहा लाहो तहा लोहो' अर्थात् जैसे-जैसे लाभ होता है वैसे-वैसे लोभ का जागरण होता जाता है और इच्छा बलवती होती जाती है। यदि लोभ समाप्त हो जाये तो उसके बाद इच्छा नहीं जगेगी। नीचे आग लगी है तो पानी में भाप बनेगी, दूध में उफान आयेगा, क्योंकि नीचे आग पड़ी है। वैसे ही जब तक हमारे भीतर आसक्ति, मूर्च्छा या लोभ की भावना बनी हुई है, तब तक इच्छाओं का जागरण भी होता रहेगा। इसके विपरीत जितना-जितना संतोष गुण आता जायेगा, आप देखेंगे कि इच्छाएँ भी शांत होती चली जायेंगी। इस संतोष गुण की प्राप्ति कैसे की जाये, इसके लिए हमें अपने ही अंतर में खोज करनी होगी, क्योंकि बाहर के पदार्थ संतोष नहीं दे पाएंगे। बाहर के पदार्थ तृष्णा को तो बढ़ा सकते हैं, पर संतोष नहीं करा पाएंगे। इच्छा को समाप्त करना है और इच्छा जगे नहीं, ऐसा प्रयत्न करना है तो दृष्टि का परिमार्जन आवश्यक है। जब तक दृष्टि का परिमार्जन नहीं होता, तब तक इच्छा शांत करना या इच्छा जगे नहीं ऐसा होना संभव नहीं है। खेत में यदि खाद दी जा रही है, पानी का सिंचन किया जा रहा है और बीज पड़े हैं, तो फिर कोई कारण नहीं है कि बीजों में प्रस्फुटन न हो, पौधे न निकलें। परन्तु यदि बीज जमीन में डाल दिया और खाद-पानी न दिया तो बीज मिट्टी में दबा रह सकता है और कालान्तर में समाप्त भी हो सकता है। वैसे ही हमारी इच्छाओं का बीज पड़ा है, उसे खाद-पानी का संयोग न मिले तो इच्छाएँ समाप्त हो सकती हैं। खाद-पानी

PDF Compressor Free Version

से तात्पर्य है अनुकूल साधनों की प्राप्ति और उनके प्रति रहा हुआ लगाव। प्रत्येक व्यक्ति चाहता है कि अनुकूलता की प्राप्ति हो जाये, प्रतिकूलता दूर हो जाये, पर यह हमारा निजी स्वरूप या 'स्व'भाव नहीं है, यह हमारा 'पर' भाव है। जब तक अनुकूल की अपेक्षा करेंगे, प्रतिकूल से अलग होने की स्थिति बनी रहेगी। यह भटकाव है।

शास्त्रकारों ने इसे आर्त्तध्यान कहा है। आर्त्तध्यान जीव का मौलिक स्वरूप नहीं है। सोमिल ने गजसुकुमाल को देखा। देखते ही भीतर कैसे भाव जागृत हुए और कैसा रोष प्रकट हो गया ! क्या कारण था ? कारण, मूल में उपादान स्वयं का रहा हुआ था। किन्तु निमित्त कारण था यह विचार कि अरे ! यह साधु बन गया ! मेरी लड़की की माँग की गई और यह साधु बनकर खड़ा हो गया ! यह इसने क्या किया ! एक अभिलाषा थी कि त्रिखण्डाधिपति के भाई के साथ मेरी लड़की का संबंध हो तो मेरा भी कद कुछ ऊँचा हो जाए। बड़े व्यक्ति से यदि कुछ संबंध स्थापित हो जाता है, तो व्यक्ति स्वयं को बहुत भाग्यशाली समझने लगता है। बहुत-से व्यक्तियों को देखा होगा कि राष्ट्रपति-प्रधानमंत्री आदि से हाथ मिलाते दिख जायें, ऐसी उनकी कामना रहती है। मन में तीव्र भावना रहती है कि ऐसे क्षण कैमरे में कैद हो जायें और यदि कैमरे में कैद हो गये तो उनका जो ड्रांइग रूम है, गेस्ट हाउस है, उसमें वे फोटो रखे जाते हैं ताकि वह बतला सके कि मैं सामान्य व्यक्ति नहीं हूँ। मैं राष्ट्रपति से मिल चुका हूँ। मेरी पहुँच प्रधानमंत्री तक है। ये मन की अभिलाषाएँ हैं या नहीं ? और सोमिल भी चाहता था कि गजसुकुमाल से संबंध हो गया तो लोगों को लगेगा कि यह कृष्ण का बयाई है, समधी है। आज भी यदि कोई व्यक्ति प्रधानमंत्री का पी.ए. है या पी.ए. भी नहीं, उसका भी कोई आदमी है तो उसकी भी ऐंठ रहती है कि मैं प्रधानमंत्रीजी के पी.ए. का संबंधी हूँ। कहीं परिचय देता है तो कहेगा प्रधानमंत्रीजी के पी.ए. मेरे मामा हैं। यह परिचय दिया जाता है। यह है मन की इच्छा। यह जितनी बलवती होती है, आत्मभाव से वह उतनी ही दूर ले जाती है। वैसी ही भावना कोई धर्मक्षेत्र में रख सकता है कि मैं आचार्यश्री के निकट का व्यक्ति हूँ। मेरी पहुँच गणधर गौतम स्वामी या तीर्थंकर देवों तक हो

PDF Compressor Free Version

सकती है। जयंतिबाई, शास्त्रों में एक ही ऐसी श्राविका का नाम है, जिसने भगवान से प्रश्न किये थे, पर क्या इस भाव से किये थे कि श्राविकाओं को बतलाया जाये कि जयंति भगवान से प्रश्न कर सकती है ? क्या गणधर गौतम ने इसलिए प्रश्न किये थे कि दुनिया जान ले कि यदि भगवान के निकट कोई साधु है तो वह गौतम है ? गौतम से पहले 9 गणधर मुक्ति में जा चुके थे। केवलज्ञान प्राप्त कर चुके थे। यदि गौतम निकट के होते तो पहले केवलज्ञान की माला गौतम को पहनायी जाती। पर क्या पहनाई गई ? यह हमारा चिन्तन या दृष्टिकोण ही हो सकता है; दिमाग की उपज ही हो सकती है। सोमिल की भी अभिलाषा पर चोट पहुँची थी। उसकी इच्छा पर तुषारापात हुआ तो वह तिलमिला उठा। आप जानते है कि यदि एक व्यक्ति को लाभ मिलना है, उसमें कोई व्यवधान पैदा करे तो वह उसे पछाड़ने का हर संभव प्रत्यत्न करेगा। क्योंकि उसे यह शिकायत होगी कि इसने मेरे लिए आने वाली लक्ष्मी के द्वार बन्द कर दिये थे। अब कुछ भी हो जाये, मैं इसे धूल चटाये बिना नहीं रहूँगा। इस प्रकार से वैरानुबंधी वैर का कर्मबंध कर लेता है। पर ध्यान रखिये कि ऐसे विचारों से दूसरे का कुछ बिगड़े, न बिगड़े, हमारा जरूर बिगड़ेगा। सोमिल तिलमिलाहट में विचार करता है- यह धूर्त है। इसने मेरे मंसूबों पर पानी फेर दिया है। ऐसे विचार करते हुए वह क्रोधित हो गया। फिर क्या था ? क्रोध में उसे कुछ भी नजर नहीं आ रहा था। उसने इधर-उधर देखा, कोई देख नहीं रहा था। देखा, मौका अच्छा है। तालाब की गीली मिट्टी लाकर, पाल बांधकर सिर पर अंगारे रख दिये।

अंगारे सिर पर धधक रहे,
समभाव से गजसुकुमाल सहे,
केवल ज्योति प्रकटाये है॥ ये पर्व पर्युषण.....।
इतिहास सुनो उन वीरों का,
गृह त्यागी और गंभीरों का,
निज सौरभ जो महकाये हैं॥ ये पर्व पर्युषण.....।

बन्धुओं ! गजसुकुमाल के मन में यदि यह भावना आती कि सोमिल मेरे सिर पर अंगारे रख रहा है और मैं समभाव से सहन करूँ तो

PDF Compressor Free Version

दुनिया इतिहास बाँचती रहेगी, तो मेरे ख्याल से आज कोई नहीं बाँचता। तब शायद गजसुकुमाल का नाम भी जुबान पर नहीं आता। पर ऐसी कोई विचारणा गजसुकुमाल के मन में नहीं आई। बल्कि उनका उस ओर ध्यान ही नहीं गया। कई कविता रचने वाले कविता में अपनी-अपनी भावना का रंग भर देते हैं कि गजसुकुमाल अपने भीतर यह विचार करते हैं कि मेरे ससुरजी मेरे सिर पर पगड़ी बांध रहे हैं। यदि वहाँ ससुर-जंवाई की भावना बनी रहती तो क्या केवलज्ञान की ज्योति प्रकट होती ? नहीं होती। ऐसे भावों से ऊपर उठना होता है। वे अंगारे उनके सिर पर धधक रहे थे और वे वहाँ सारे के सारे संयोगों और इच्छाओं को जलाकर समाप्त कररहे थे। तब भीतर का केवलज्ञान प्रकट हुआ था। ऐसे ही नहीं प्रकट हुआ था। केवल ज्ञान की प्राप्ति के लिये स्वयं को पूर्णतया तपस्या में तपाना पड़ता है और जब इच्छा जल जाती है तब फिर देखिये कि केवलज्ञान की ज्योति कैसे प्रकट होती है मुक्ति वरमाला लेकर खड़ी हो जाती है कि आओ, मैं वरण करने को तैयार हूँ। नहीं तो कितने भी मुक्ति के लिए खड़े रहिये, गर्दन नमा लीजिये, पर माला गले में नहीं पड़ेगी। यदि यह भी चाह हो कि मुक्ति की वरमाला पड़ जाये तो भी नहीं पड़ेगी। इन सभी इच्छाओं को समाप्त करो। हम इच्छा करते हैं इसलिए रंग भर देते हैं कि मुक्ति की कामना करनी चाहिये। इच्छा तो हमने बहुत की, पर इच्छा करने से ही सबकुछ नहीं मिलता। पर यदि चाह समाप्त कर लें तो चाह समाप्त करते ही तत्काल मुक्ति के द्वार खुलते मिलेंगे। यदि नंबरी ताला है और नंबर न मिलाओ, टटोलते रहो तो द्वार नहीं खुलेगा और नंबर मिला लिया, तो खुल जायेगा। नम्बर कैसे मिलते हैं, यह भी जान लीजिये।

एक संत ऐसे ही थे, जिन्हें लब्धि प्राप्त थी, जिससे वे किसी के भी भाव पढ़ सकते थे। गृहस्थ के यहाँ गोचरी हेतु गये। पातरा रख दिया और गृहस्थ के भाव पढ़ने लगे। संयोग बना कि गृहस्थ ने घी से पात्र भर दिया, पर वे कुछ नहीं बोले। गृहस्थ विचार करने लगा- कैसा साधु हैं ? घी पातरे से बाहर जा रहा है फिर भी नहीं कहता कि बहुत हो गया, सब्र करो; बिना कहे बंद करूँ तो कहेंगे कंजूस है। कहा नहीं, पर मन में तो आ ही गया। भाव पढ़ने में तन्मय मुनि गृहस्थ के गिरते भाव देख एकदम

PDF Compressor Free Version

से बोल पड़े- ''ठहर जा-ठहर जा।'' गृहस्थ बोला- कांई ठहर जावे, अबे ठहरने रो ध्यान आयो ? तब मुनि ने पात्र की ओर देखा और बोले- श्रावकजी ! बात दूसरी थी। श्रावक ने कहा- आप अब कहते हो, ठहर जा ! इतना कहकर चला गया। अब तो पीपे में पावभर ही बचा होगा। संत कहने लगे- मेरी गलती है। मेरा ध्यान भिक्षा में नहीं रहा था। मैं भाव पढ़ने में रह गया था। तब रोका, जब भाव गिरते चले गये। पहले भाव बढ़ते रहे थे। ज्यों-ज्यों बढ़े, पहले-दूसरे देवलोक को लांघकर निरन्तर आगे बढ़ते रहे। पर भाव गिरने लगे तो ऐसे कि तिर्यंच गति जैसा बन गया और गिरते जा रहे थे तो मैंने कहा- ठहर जा। श्रावक हतप्रभ रह गया। कहा- गुरुदेव ! क्या फरमा रहे हैं ? मुनिजी बोले- ''जो देखा वह कह रहा हूँ।'' श्रावक ने आजिजी से कहा- गुरुदेव ! अब एक बार फिर पातरा माँड दो। पर राई का भाव तो रात में ही चला गया था। अब कुछ मिलने वाला नहीं था।

श्रेणिक ने एक बार वंदन किया तो कहा- छः नारकी के बंधन टूट गये। अब तो एक ही बाकी है। वह फिर तिक्खुत्तो, आयाहिणं, पायाहिणं..... करने लगा। पर मगध सम्राट् श्रेणिक को भगवान ने कहा- अब यह लागू नहीं होगी। पहले जो वंदना थी उसमें चाह नहीं जुड़ी थी, अब चाह-अभिलाषा जुड़ गई। अब मन में हो गया कि वंदन से नरक के बंधन टूट जायेंगे, तो ऐसे नहीं टूटेंगे। श्रावक कहता है- गुरुदेव ! एक बार और माँड दो पातरा, दूसरा पीपा खोलकर बहरा दूंगा। पर अब बात एक नहीं रही थी। अब दस पीपे भी बहरा दे तो भी अब वह चीज नहीं, वह बात तो चली गई। इसीलिये कहा जाता है कि जिसके पीछे चाह जुड़ जाती है उसका सारा का सारा स्वरूप अलग हो जाता है, पर जहाँ चाह नहीं है तो वहाँ क्या बनता है ? मगध सम्राट् श्रेणिक ने एक बार के वंदन से 6 नरक दलिक समाप्त कर दिये थे। एक बार का दान दिया तो देवलोक तक पहुँच गया। जीर्ण सेठ के लिए भगवान कहते हैं- वैसे ही परिणाम अन्तर्मुहूर्त तक और चढ़ते तो केवलज्ञान प्राप्त हो जाता। यह है नम्बर मिलाने का तरीका। इसलिए हम कोई भी धार्मिक क्रिया करें तो उसमें चाह जोड़ें नहीं। उसे समाप्त करने का प्रयत्न करें। तो आत्मा में

PDF Compressor Free Version

स्थित मिलेंगे, परन्तु जितनी चाह जोड़ते जाएंगे उतने आत्मा से बाहर निकलते हुए चले जाएंगे। सड़क पर घूमते व्यक्ति की तरह होंगे, घर में मौजूद नहीं रह पाएंगे। इसलिए कहा- इच्छा आकाश के समान अनंत है, उस पर ब्रेक नहीं लगाया तो आकाश की भांति उसका भी अंत नहीं आएगा। वह आपके जीवन को कटी पतंग की भांति कहाँ ले जाकर पटकेगी, पता नहीं। चाह आपको नरक में डालेगी। वह तिर्यंच में और अनंत संसार में परिभ्रमण कराने वाली है। यह स्वरूप है, फिर भी हम हैं कि चाह को अपने साथ जोड़े रखेंगे।

घेवरिया मुनि की चाह की बात आपने सुनी होगी। एक मुनि गोचरी आये, श्रावक ने बहुत आग्रह किया कि घेवर लेना ही पड़ेगा। उन्होंने कहा- नहीं, पर आग्रह बहुत था तो बड़ी कठिनाई से थोड़ा-सा लिया। इधर कारीगर काम कर रहा था। मन में सोच रहा था कि घेवर मुझे भी खाने को मिले। पर सेठ देवे कांई ? मैं महाराज थोड़ी हूँ। महाराज को तो दे दे। महाराज आये तो बादाम की कतली और वे मना करें तो भी बर्तन खाली कर दे। पर घर में नौकर काम कर रहा है, उसे क्या भरपेट बादाम की कतली मिलती है ? घर में विवाह-शादी है, हजारों मेहमान जीमकर जायेंगे, पर नौकर को क्या मिलेगा ? शास्त्रकारों ने सेवक को कौटुम्बिक पुरुष माना है। वह 24 घंटे ड्यूटी देता है, पर उसके साथ कैसा व्यवहार होता है ? कभी आपने 'जवाहर किरणावली' को पढ़ा ? आचार्य नानेश की वाणी सुनी कि सेठों के घर स्वयं के लिए पतले-पतले फुलके और नौकर के लिए मक्के के या बाजरे के सोगरे। वह मूंग-मसूर की दाल खाना क्या जाने ? उस समय की बात बता रहा था, हो सकता है आज गेहूँ के मिलते हों। किन्तु कहने का आशय है कुछ भी खिलायें, उसका पेट भर सकता है। पर यह भेद नहीं होना चाहिये। मानवता के आधार पर उसे मानवीय अधिकार दिया जाये तो कहीं भी विषमता नहीं पनपे। विषमता कब पनपती है ? जब मानवता के अधिकार से मानवता नहीं मिलती। दुत्कार मिलती है तो वह उसके भीतर विपरीत परिणमन करती है। वह एक दिन बगावत के रूप में खड़ी हो जाती है। राजाओं के पीछे बगावत क्यों हुई ? क्योंकि उन्होंने शोषण किया। आज बंगाल में

PDF Compressor Free Version

व्यापारियों के लिए क्यों कहा जाता है कि आये थे कम्बल-लोटा लेकर, लेकिन मालामाल हो गये। इसमें व्यापारियों की भी गलती रही है। एक को इक्कीस बनाने में लग गये। दूसरा दृष्टिकोण यह भी है कि यदि महाजन नहीं होते तो वहाँ विकास भी नहीं होता। जहाँ भी महाजन का बच्चा पहुँचा, वहाँ विकास हुआ है। हम विहार करके आ रहे थे तो एक गांव वालों ने अमुक गांव के लिए कहा- उस गांव में नहीं रुकना, वह ठीक नहीं है। पूछा- क्यों ठीक नहीं है ? बोले- लोग ठीक नहीं हैं। हमने पूछा- महाजन का कोई घर हैं ? एक भी नहीं। तब चिंतन चला कि यदि महाजन पहुँच गया होता तो वहाँ परिवर्तन हो जाता। पुराने समय में कहावत चली थी-

''महाजनो येन गता स पंथा।''

जहाँ से महाजन निकले, वह मार्ग बनता है। उस पर दूसरे व्यक्ति बेहिचक चलते हैं। पर आज महाजनों के लिये महाजनत्व का 'महा' हटाकर मात्र 'जनत्व' रखना भी कठिन हो गया है। उसका कारण है हमारे भाईयों की इच्छा, चाह, लोभ, लूट-खसोट जैसी प्रवृत्तियों का बढ़ जाना। परिणाम यह हुआ है कि पूरी महाजन जाति लांछित होने की स्थिति में आ गई है। बन्धुओं ! वह कारीगर चला गया महाराज के पीछे-पीछे। स्थानक में जाकर कहा- ''घेवर के लिए इतना आग्रह था, फिर क्यों नहीं लिये ?'' महाराज ने कहा- ''लाकर क्या करता ? रात्रि को हमें रखना नहीं। उतना ही लेना है जितना दिन में उठ जाये।'' कारीगर ने कहा- ''आप क्यों विचार करते हो, मैं खा लेता।'' मुनि ने कहा- ''खा तो लेते, पर हम ऐसे देते नहीं। हम लाते हैं साधु के लिए।'' कई भाई कहते हैं कि महाराज! यह तो उपकार का काम है। आप क्यों नहीं लेते ? हमने तो देखा है संतों को पातरे में से बादाम-काजू निकाल कर देते हुए। बन्धुओं ! दुनिया बहुरंगी है। यह भी दुनिया का एक रूप है, इसलिए इसमें आश्चर्य नहीं। पर साधु की मर्यादा है। वे अपने लिए लाते हैं। गृहस्थ उन्हें वितरण के लिए नहीं देते। यदि वह सांभोगिक के अलावा किसी को देता है तो वह चोरी करने वाला है। इसलिए साधु अन्य को नहीं दे सकते। पर इसका मतलब यह नहीं है कि उनके घट में करुणा

PDF Compressor Free Version

नहीं है। यदि साधु बना तो खूब लाकर देंगे। कारीगर ने पूछा- ''पक्की बात है, खिलाओगे !'' उत्तर मिला- ''क्यों नहीं खिलाएंगे ?'' बन गया वह महाराज। वह खाता रहा। खाते-खाते विचार एकदम बदले- मैंने कपड़े बदले तो रोज घेवर मिल रहे हैं, मान-सम्मान मिल रहा है। यदि अंतर भी इतना बदल जाता तो क्या स्थिति बन जाती ! चिन्तन जैसे ही बदला, स्थिति बदल गई। हलुकर्मी आत्मा पाटे पर बैठने के निमित्त से भी ले तो लेने के बाद उसमें परिवर्तन भी आ सकता है। वे आध्यात्मिक विकास-मार्ग पर बढ़ सकते हैं। पर भारी कर्म जीव देवलोक के सुख के लिए करता है तो वही प्राप्त होता है, आगे कुछ हासिल नहीं करता। बातें कुछ इधर-उधर बिखर गई। पर बीच में कुछ आती हैं तो स्पष्ट किये बिना भी चैन नहीं पड़ता।

सोमिल ने तैश में आकर अंगारे रख दिये, पर गजसुकुमाल शांत भाव में बने रहे। हम चाहे कुछ भी कल्पना करें, विचारों का कोई रंग भर दें, पर वहाँ कोई रंग नहीं था। वह बैरंग चल रहा था। अध्यवसायों में किसी प्रकार का रंग नहीं था। न तेजोलेश्या का, न पद्म लेश्या का, लेकिन शुक्ल भावों में चल रहे थे। बल्कि यह कह दूं कि उन्हें यह एहसास ही नहीं हुआ कि सिर पर अंगारे रखे गये थे, क्योंकि शरीर पर ममता ही नहीं थी। शरीर का अलगाव कभी का कर चुके थे। शरीर का अलगाव कर दिया जाय तो संवेदना समाप्त हो जाती है, जैसे- डॉक्टर यदि क्लोरोफार्म सुंघा दे, फिर अंग भी काट दे तो व्यक्ति को मालूम नहीं पड़ता है। उसे दर्द महसूस नहीं होता है। नहीं तो सुई लगा दें तो चिल्लाएगा, दर्द होगा, पर क्लोरोफार्म सुंघा कर महत्त्वपूर्ण अंग काटने पर भी दर्द महसूस नहीं होता। वहाँ वेदना का रूप बदल जाता है। हमारी संवेदन शक्ति उस समय गौण हो जाती है। फिर चाहे हार्ट चेन्ज कर दो। उस समय कोई अंगारे रखे, कीलें ठोके, कोई अंतर नहीं पड़ता है। इसलिए कभी-कभी कहा जाता है।

कुल्हाड़ी से कोई काटे,
कोई आ फूल बरसाये....।

PDF Compressor Free Version

गजसुकुमाल मुनि ने कितने व्याख्यान बांचे ? एक भी नहीं। और मुक्ति रुकी कि हो गई ? मुक्ति हो गई। चाहे एक भी व्याख्यान नहीं बांचा होगा, पर उनका मौन ही व्याख्यान था जो इतने हजार वर्षों के बाद भी कायम है। लगभग 86000 वर्षों का समय बीत चुका है, पर उनका मौन व्याख्यान जो प्रेरणा आज भी दे रहा है वह हमारे मुँह से बोला हुआ व्याख्यान भी नहीं दे सकता। गजसुकुमाल की छवि जैसे ही सामने आती है, हम अपने को तोलने लगते हैं। उनके तो सिर पर अंगारे धधक रहे थे। हमारे कहाँ धधक रहे हैं ? हृदय जल रहा है। माथा जल जाये तो कोई बात नहीं, तर्क समाप्त हो जायेंगे पर हृदय समाप्त हो गया, हृदय चला गया तो ?

जो भरा नहीं है भावों से
बहती जिसमें रसधार नहीं।
वह हृदय नहीं है पत्थर है,
जिसमें स्वदेश का प्यार नहीं।
जिसमें सद्धर्म का प्यार नहीं।

जिसमें धर्म की धारा प्रवाहित नहीं हो रही है, वह हृदय भी क्या हृदय है ? वह तो पत्थर हैं। यदि हृदय में अंगारे धधक रहे हैं तो गजसुकुमाल का अनुकरण कर शीतलता का समीर प्रवाहित करें कि वे इच्छा के अंगारे समाप्त हो जायें। यही पर्युषण पर्व हमें संदेश देता है कि उस पर शांत भावों का छिड़काव कर दो। यदि छिड़क दिया तो आग सारी समाप्त हो जायेगी। गर्म तवे पर पानी की एक बूंद डाली जाये तो वह वहाँ दिखाई नहीं देगी। किंतु निरन्तर छिड़काव चालू रहे तो आग शांत, तवा ठंडा और पानी की बूंदें दिखाई देने लगेंगी। वैसे ही एक समय ऐसा आयेगा कि हृदय अत्यंत शांत हो जायेगा।

कृष्ण प्रभु अरिष्टनेमि के पास पहुँचे। इधर-उधर देख रहे हैं। किसे खोज रहे हैं ? और आपके घर से किसी ने दीक्षा ली हो और आप दूसरे दिन आयें तो किसकी अपेक्षा रहेगी ? भाई महाराज का दर्शन कर लूं। कृष्ण की आँखें भी खोज कर रही हैं। भगवान कहते हैं- मार्ग में क्या घटना घटी ? वृद्ध की एक ईंट तुमने रखी तो सारी की सारी ठिकाने

PDF Compressor Free Version

पहुँच गई। जैसे तुमने वृद्ध को सहयोग दिया, वैसे ही गजसुकुमाल को सहयोग मिल गया वे सभी कर्मों का क्षय करके मोक्ष चले गये? उन्होंने मुक्ति को प्राप्त कर लिया। कृष्ण वासुदेव विचार करने लगे, मुक्ति को प्राप्त कर गये ? मैं दर्शन भी नहीं कर सका। भगवन् ! वह व्यक्ति कौन है जिसने प्रताड़ित किया मेरे भ्राता मुनिवर को ? भगवान ने यह नहीं कहा कि अमुक ने प्रताड़ित किया, उन्होंने कहा- सहयोग दिया। वह कौन है ? उत्तर मिला- जब तुम वापस लौटोगे तब तुम्हें देखकर जो मार्ग में धड़ाम से भूमि पर गिर पड़े, समझ लेना वही है। बहुत लंबी घटना है। संक्षेप में सुनो। कृष्ण ने सोचा- राजमार्ग से नहीं, गली मार्ग से चलो। सोमिल ने कृष्ण को गली में देखा। उसने सोचा- अरे ! इन्हें तो भगवान ने बता दिया होगा और वह वहीं पर गिरकर मर गया।

राम किसी को मारे नहीं,
नहीं हत्यारा राम।
अपने आप मर जाएगा,
कर-कर खोटे काम ॥

तीर्थंकर परमात्मा किसी को मारने वाले नहीं हैं। वे तो प्रत्येक को अभय देते हैं, पर व्यक्ति को उसके अपने काम ही मृत्यु तक पहुँचा देते हैं। सोमिल को किसी ने कुछ कहा नहीं, पर उसी का पाप उसको खा गया और वैसी स्थिति बनी। इसी तरह हम भी छिपकर पाप करें और सोचें कि कोई नहीं देख रहा है तो यह मत भूलो, सिद्ध भगवान देख रहे हैं। कदाचित् सिद्ध भगवान को मानो न मानो, पर तुम्हारी आत्मा तुम्हें जरूर देख रही होती है। आत्मा से कुछ छिपता नही है। वह जागृत है। वह पापकृत्य देख रही होती है। वे कृत्य संस्कार छोड़कर जाते हैं और उनका फल मिलता है। इसीलिए कहा गया है-

करोगे बुराई, मिलेगी बुराई।
करोगे भलाई, मिलेगी भलाई॥
यदि भला किसी का कर न सको तो
बुरा किसी का मत करना...॥

आज के दिन कोई किसी का बुरा नहीं करेगा। कितने व्यक्ति

PDF Compressor Free Version

तैयार हैं कि आज के दिन किसी की बुराई नहीं करनी है ? देखिये, क्या नजारा है जयपुर का । एक साथ धड़ल्ले से हाथ खड़े कर दिये गये हैं। लोग किसी का बुरा नहीं करना चाहते। इसलिए मन कहता है।

शुभ पर्व पयूर्षण सुन्दर आये हैं जयपुर शहर में.....।

बन्धुओं ! यह तो प्रंसग आ गया तो कड़ी बात कह दी, वस्तुतः उत्तम पुरुषों के चरित्र सुनने के बाद विचार न बदलें तो समझ लीजिये कभी नहीं बदलेंगे। इसीलिए अतंगड़ सूत्र का वाचन किया जाता है, ताकि उस दर्पण में हम अपनी छवि देखते रहें। उनके चरित्रों को देख, अपने स्वयं के चरित्र का मूल्यांकन करें कि कहाँ-कहाँ मेरे जीवन में बुराई है। जहाँ बुराई है वहाँ से उसे दूर कर, धर्म में अपने जीवन को लगा दें।

महाश्रमणीरत्ना इन्द्रकंवरजी म.सा. को खड़े होकर बोलने में असुविधा होती है। पाट पर बैठकर भी बोलने में श्वांस भरने लगता है, किंतु संत कह दें तो आज्ञा की पालना करने में वे शारीरिक असुविधा और कष्ट को गौण मान लेती हैं। आप जानते हैं कि यदि अनुशासन, आज्ञा-पालन और आराधना बड़े करते हैं तो साथ रहने वाले छोटे अपने आप संस्कारित हो जाते हैं।

उत्तम पुरुषों के चरित्र की तो महिमा है ही, अपने से बड़े और पूज्य तथा संत-सतियों के जीवन और चरित्र भी प्रेरणा देने वाले होते हैं स्वयं को प्रेरणास्पद बनाने के लिए। इसलिए त्याग करना पड़ता है तथा कष्ट और सुविधा भी उठानी पड़ती है।

आचार्यश्री चौथमलजी म.सा. के घुटनों में दर्द था। प्रतिदिन खड़े-खड़े हाथ में लकड़ी लेकर प्रतिक्रमण करते थे। श्रावकों ने प्रार्थना की- ''अन्नदाता ! आप विराजकर कर लें।'' उन्होंने कहा- श्रावकजी ! आज मैं बैठकर करूँगा तो कल साधु हैं ना, उन्हें बैठना भी भारी पड़ेगा।'' देखिये महापुरुषों का चिन्तन, वे स्वयं को कष्ट में डाल सकते हैं, किन्तु संस्कृति को धूमिल नहीं होने देते। यह नहीं कि एक के निमित्त से संस्कृति को आंच पहुँचे। महाश्रमणीरत्नाजी को तकलीफ, है पर संकेत मिला तो खड़े हो गये। चौरड़ियाजी ने निवेदन किया-

PDF Compressor Free Version

''विराजे-विराजे फरमा दें।'' बात आपकी ठीक है, किन्तु एक तो बैठे-बैठे आवाज दूर तक नहीं जाती, फिर अनुशासन की पालना बड़े करते हैं तो उससे छोटों को संस्कार मिलते हैं। कई बातें बतलाने से समझ में आती हैं और कई मौन से। जो बतलाकर नहीं दिया जा सकता, वह मौन से दिया जा सकता है। वहाँ मौन प्रभावी बनता है।

उपदेश चाहे मौन दें या मुखर, उसका मूल ध्येय एक ही है कि आत्मा, जो इच्छाओं में उलझी हुई है, वह उनसे मुक्त हो। इच्छाओं से मुक्त होना ही तप है। यह तप आत्मा का स्वभाव है। इच्छाओं में रहना आत्मा का स्वभाव नहीं, विभाव है। इस विभाव से स्वभाव में आना ही आत्मा में आना है। आत्मा में ही निरन्तर बने रहने का नाम ही वीतरागता है, ऐसा हम कह सकते हैं। मोक्ष जाने वाली प्रत्येक आत्मा को इसी मार्ग से गुजरना होता है। गजसुकुमाल मुनि भी इच्छाओं का अन्त करके निर्ग्रन्थ बने और मुक्ति का वरण किया। हम भी करे इच्छाओं का अन्त, बनें सच्चे निर्ग्रन्थ।

29.08.2000

❖ ❖ ❖

PDF Compressor Free Version

5. पाएं सुन्दर शीतल छांव

आत्मा के स्वरूप का बोध कैसे किया जाए यह एक विचारणीय प्रश्न है। आत्मा की प्रत्यक्ष अनुभूति बहुत आगे का विषय है। अनुमान, प्रमाण से उस आत्मा के अस्तित्व का बोध किया जा सकता है। लक्षणों के आधार पर उसकी पहचान की जा सकती है। पानी के स्वभाव से पानी का भी बोध होता है। अग्नि के स्वभाव से अग्नि का बोध किया जा सकता है कि अग्नि ऊष्ण है। यदि हाथ पर अंगारा रखा जाए तो अंधा व्यक्ति भी बतला सकता है कि आग मेरे हाथ पर रखी गई है। वैसे ही ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तप – ये आत्मा के लक्षण हैं और इन सब लक्षणों में आगे जो लक्षण बताए गए हैं उनमें वीर्य का नाम भी आता है। वीर्यशक्ति का दूसरा नाम पुरुषार्थ और पराक्रम भी है। वह स्वयं आत्मा की शक्ति है, किन्तु उस पर भी आवरण होता है। सूर्य अपने आप में सूर्य है, बादलों की ओट में उसकी तेजस्विता हम तक नहीं पहुँच पाती, परन्तु बादलों की ओट से सूर्य की तेजस्विता समाप्त नहीं होती है, किन्तु सूर्य की तेजस्विता हम तक नहीं पहुँच पाती है। वैसे ही कर्मों के आवरण से आत्मा की तेजस्विता समाप्त नहीं हो जाती, किन्तु इस तेजस्विता का हम अपने भीतर अनुभव नहीं कर पाते हैं। परन्तु आत्मा की तेजस्विता से कर्मों का आवरण विदीर्ण होने लगता है, हटने लगता है, दूर होने लगता है और हमारा पौरुष, हमारी शक्ति जागृत हो जाती है।

प्रभु महावीर की शक्ति भी पहले उसी प्रकार से आवरित थी। साधना का प्रभाव बढा तो कर्मों का आवरण क्षत-विक्षत हो गया। बादल कितने ही गहरे हो जाएं, किन्तु तेज हवा यदि चल जाए तो तेज हवा उन बादलों को तितर-बितर कर देती है, हटा देती है। वैसे ही यदि हमारी साधना की हवा, हमारे अध्यवसायों की दृढता अगर प्रचण्ड रूप धारण कर ले तो कर्मों के बादलों को खिसकने में देर नहीं लगती। आवश्यकता है अध्यवसाय को प्रचण्ड वेग देने की। जब तक वेग उत्पन्न नहीं कर

PDF Compressor Free Version

पाते हैं, अध्यवसायों के वेग को प्रचण्डता नहीं दे पाते हैं तब तक बादल बने रहते हैं। आज तो आपको उतना अनुभव नहीं हो रहा होगा, किन्तु एक-दो दिन पहले आपको लगा होगा कि काफी उमस हो रही है। उमस क्यों होती है ? बादल होते हैं और हवा नहीं होती है तो उमस हो जाती है। वैसे ही हमारे कर्मों के बादल घिरे हुए हैं और अध्यवसायों की हवा सही नहीं चले तो व्यक्ति अपने भीतर उमस महसूस करने लगता है। उसको भीतर ही भीतर घुटन महसूस होने लगती है। यह घुटन तभी होती है जब अध्यवसायों की निर्मलता नहीं होती है अथवा अध्यवसायों की प्रचण्डता नहीं होती है। तब इन अध्यवसायों के द्वारा आगे नहीं बढें तो भीतर घुटन महसूस होने लगती है और व्यक्ति हताश और निराश हो जाता है। घुटन से व्यक्ति टूट भी जाता है। क्या कारण है ? कारण एक ही है- कर्मों का आवरण बना हुआ होता है, उमस बनी हुई होती है और भीतर के अध्यवसायों का वेग सम्यक्रूप से कार्यरत नहीं होता है। यदि हम कर्म के आवरण को दूर नहीं कर पा रहे हैं तो अध्वयसायों को तीव्र बनाएं। यदि अध्यवसाय तीव्र हो गए और अध्यवसायों की हवा चलने लग गई तो कर्मों के आवरण को भी समाप्त किया जा सकता है, उसे हटाया जा सकता है।

इस पर्व पर्युषण की अनोखी महिमा है और इस पर्व पर जिन उत्तम महापुरुषों का चरित्र आपके सम्मुख प्रस्तुत किया जा रहा है, उनमें एक है गजसुकुमाल मुनि, जिन्होंने अपने अध्यवसायों के वेग से सारे घनघाती बादलों को तितर-बितर कर दिया था और अपने घनघोर प्रयासों से सम्पूर्ण कर्मों का क्षय करके सिद्ध स्वरूप को प्राप्त कर लिया था। केवल गजसुकुमाल मुनि की आत्मा ही नहीं, ऐसे अनेक महापुरुष हैं जिनका वर्णन अंतकृतदशासूत्र के माध्यम से चल रहा है। आज भी आपने सुना होगा जालिकुमार एवं मयालिकुमार आदि के बारे में। वे भी दीक्षित हुए और जब जालिकुमार व मयालिकुमार को दीक्षित किया गया तो कृष्ण वासुदेव का मन भी उद्वेलित हो गया। उन्होंने विचार किया ये छोटे-छोटे राजकुमार हैं और इन सबको धर्म की बात लग जाती है जबकि मैं इतनी बार भगवान के समीप आ चुका हूँ, इतनी बार भगवान की वाणी सुन

PDF Compressor Free Version

चुका हूँ, फिर भी अब तक मेरे भीतर वैराग्य का भाव प्रकट नहीं हो रहा है। उनका मन बहुत खिन्न हो गया, उद्वेलित हो गया, मन में जैसे उमस होने लगी, घुटन-सी होने लगी। उनकी उस अवस्था का अनुभव अरिष्टनेमि भगवान ने किया। उन्होंने कृष्ण वासुदेव को समाधान देते हुए कहा- वासुदेव ! तुम्हारे मन में जो यह एक भावना जागृत हो रही है, तुम्हारे अध्यवसायों में जो यह एक विचारणा पैदा हो रही है कि जालि-मयालि आदि राजकुमार तो दीक्षित हुए, किन्तु पता नहीं मेरे कौन-से कर्म आड़े आ रहे हैं, पता नहीं मेरे कौन-से पिछले कर्म बने थे जो मैं संयम जीवन को स्वीकार नहीं कर पा रहा हूँ। जो ऐसे विचार मन में आये, उसका कारण है कि कृष्ण जितने भी वासुदेव जन्म लेते हैं वे निदानपूर्वक होते हैं अर्थात् पहले उनका यह संकल्प होता है कि मेरी साधना का यदि कोई प्रभाव हो तो मैं वासुदेव का स्वरूप प्राप्त करूँ, अपने पूर्वजन्मों की साधना को वे एक वासुदेव का भव प्राप्त करने के लिए दांव पर लगा देते हैं। इसलिए वे यहाँ पर वासुदेव तो बन जाते हैं, किन्तु उनका इतना पौरुष नहीं जग पाता कि वे संयम की छांव को स्वीकार कर सकें।

परन्तु जो शक्तियाँ कृष्ण वासुदेव में नहीं थीं वे शक्तियाँ आज के इन मानवों में रही हुई हैं। वे चाहें तो अपनी उस शक्ति का जागरण कर सकते हैं। हनुमानजी जब सीताजी की खोज में निकले और सामने समुद्र आ गया तो सब को बेचैनी होने लगी कि अब इसको कैसे पार किया जाए ? तब जामवंतजी ने कहा- "हनुमानजी, आपके भीतर बड़ी शक्ति है और आपके पिता पवन हैं। आप इस शक्ति को जागृत करो। किन्तु आपकी शक्ति के साथ में एक शाप भी लगा हुआ है और वह शाप यह है कि आपको अपनी शक्ति स्वयं याद नहीं आएगी, यदि कोई दूसरा याद दिलाएगा तो वह शक्ति जागृत हो जाएगी।" हमारे साथ भी कभी ऐसा ही होता है। महाराज थोड़ी मनुहार करें, हमें अपनी प्रकृति और क्षमता की याद दिलाएं तो कुछ त्याग-तपस्या हम भी कर लें। हमारा स्विच ऑन कर दें तब तो हम सामायिक कर लें, नियम कर लें, पौषध कर लें। महाराज कहें ही नहीं तो कैसे करें ? हम तो गए थे, महाराज ने कहा ही नहीं कि सामायिक करो। महाराज ने कहा ही नहीं कि उपवास

PDF Compressor Free Version

करो। जब महाराज ने कहा ही नहीं तो कैसे करें ? जरा इस स्थिति पर विचार करें ! आप किसी के यहाँ भोजन करने चले जाएं, किन्तु सामने वाला मनुहार ही नहीं करे तो क्या करेंगे? भोजन किए बिना कैसे चले जाएंगे ? भूख तो लगी हुई है, परन्तु सामने वाला कह ही नहीं रहा है तो भोजन कैसे करें ? ऐसे विचार वहाँ तो ठीक भी हो सकते हैं, परन्तु जब सन्तों के स्थान पर, धर्म के स्थान पर ऐसे विचार करते हो तो यह ठीक नहीं है, क्योंकि वैसे तो सबको आमन्त्रण दिया जा चुका है और पावणा-पेही सहित, यह आपने ध्यान रखा या नहीं, पर पर्व पर्युषण प्रारम्भ होने के पहले यह बात आपको ध्यान दिलाई गई थी कि इन आठ दिनों में घर का कोई भी सदस्य संत-दर्शन से वंचित न रहे। यदि एक महीने का बच्चा हो तो वह भी संत-दर्शन का लाभ उठाए और कोई शतक पार कर गया हो और वह बिना सहारे के आने की स्थिति में नहीं हो तो उसे भी संत-दर्शन का लाभ प्राप्त करवाया जाए। इसलिए आमंत्रण-निमंत्रण में कहीं कोई कमी नहीं है। यह बात अलग है कि कोई बार-बार मनुहार की आवश्यकता समझता हो और उतनी मनुहार नहीं हो पाई हो तो वह भी बतला देना कि कितनी बार क्या मनुहार होनी चाहिए ?

मैंने पहले भी कहा था कि जयपुर के लिए मैं नया हूँ, साधु बनने के बाद पहली बार आने का प्रसंग बना है इसलिए यहाँ के रीति-रिवाजों की मुझे जानकारी नहीं है। मेवाड़ में तो दो-तीन मनुहार के बाद आदमी ढीला हो जाता है। पहली बार कहते ही नहीं बैठता, यह मेवाड़ की रीति है। कोई जीमणे चला जाए, पेट में चूहे दौड़ लगा रहे हों, पर पहली बार कहते ही नहीं बैठता। परन्तु दूसरी बार, तीसरी बार कहने लग जाएं तो कहेगा- ''भूख नहीं है !'' पर तीन बार आपने आग्रह कर लिया है, संघ की बात भी है, तो माननी ही पड़ेगी। तीन बार कहने के बाद भोजन करने के लिए तैयार हैं। किन्तु जयपुर की बात क्या है, मुझे पता नहीं है कि कितनी बार कहने पर भोजन करने की तैयारी करेंगे। वैसे जयपुर के लिए यह कहा जाता है कि यह जिनवाणी का रसिक क्षेत्र है और यहाँ पर वीतराग वाणी को सुनने के लिए व्यक्ति और श्रावकों का

PDF Compressor Free Version

मन-मयूर तैयार रहता है। जैसे ही जिनवाणी की गाज होती है, उनका मन-मयूर नाचने लगता है, खिलने लगता है, हर्षित होने लगता है। जिनवाणी की रुचि की बात स्व. महापुरुष माधवमुनिजी ने कही थी। उनके मुखारविन्द से यह बात कही गयी थी। उनका अनुभव रहा था कि यह क्षेत्र जिनवाणी का रसिक है। ऐसा उन्होंने अनुभव किया था और मैं भी अनुभव कर रहा हूँ। जिन व्यक्तियों ने जिनवाणी के रस का घूँट ले लिया है, उनको तो उसका रस सुहाता है, किन्तु जो भाई परवैया होते हैं उनके लिए हो सकता है कई प्रकार की लाचारियाँ हों, किन्हीं को अपनी रोजी-रोटी की आवश्यकता होती है, किन्हीं को व्यापार की चिन्ता रहती है, किन्हीं की और कोई स्थिति रह सकती है। किन्तु बन्धुओं ! यदि मूल को पकड़ लिया तो कोई भी स्थिति हो, अपने-आप सही हो सकती है।

इन सब के मूल में पुण्य की अवस्था होती है और यदि वह संचित हो गया तो वह फलेगा और उसका आपको लाभ मिलेगा, इसमें शंका की बात नहीं है। किन्तु कई बार हम टहनी और पत्तों को देखने लग जाते हैं, मूल को भूल जाते हैं। एक किसान की तबीयत थोड़ी नरम हो गई तो उसने अपने पोते से कहा कि आज मैं जा नहीं पा रहा हूँ इसलिए तुम पौधों को पानी पिला देना। उसने कहा- ठीक है। अब संयोग ऐसा बना कि किसान को टायफाइड हो गया और वह एक महीने तक नहीं जा पाया। फिर 27 दिन का टायफाइड व 27 दिन की कमजोरी। टायफाइड होता है तो उतने ही दिन कमजोरी भी मार करती है। जब 27 और 27 अर्थात् 54 दिनों तक वह नहीं जा सका और फिर उसके बाद बगीचे में गया, खेत में गया, तो देखा कि पौधे कुम्हलाये हुए थे सूख रहे थे ! तब उसने अपने पोते से कहा- "मैने तुम्हें पानी पिलाने के लिए कहा था ना ?'' पोते ने कहा- ''मैं रोज पानी पिलाता हूँ किन्तु ये भी बड़े अजीब हैं, बड़े नखराले हैं, आप से तो पानी पी लेते हैं और मेरे से पानी पीते ही नहीं हैं। रोज मुँह चढा ही रहता है।" किसान ने पूछा कि ऐसी क्या बात है तो उसने कहा- "मैं बड़े बर्तन में पानी भरकर लाता था और इनके फूलों में, इनके पत्तों में ऐसे ले-लेकर बहुत समय तक खड़ा रहता था, किन्तु पानी का बर्तन भरा का भरा ही रह जाता था और ये पेड़-पौधे पानी पीते ही नहीं थे। क्या पेड़-पौधों को पानी इस तरह

PDF Compressor Free Version

पिलाया जाता है ? यदि आपको कोई कह दे कि इन पौधों को पानी पिलाना है तो आप कैसे पिलाएंगे ? आप तो ऐसे नहीं पिलाएंगे ? कैसे पिलाएंगे क्या पता ? इसलिए आप यह मत सोच लेना कि पढे-लिखे सारे विद्वान् हो जाते हैं, पढे-लिखे मूर्खों की भी दुनिया में कमी नहीं है।

कृषि विभाग का एक अधिकारी, जिसका ट्रान्सफर हो गया था, वह गाँव में आया और उसने किसानों से कहा- "देखो, जब तुम्हारी फसल पक जाए तो फसल मुझे दिखाए बिना, मुझे सूचना दिए बिना कटनी नहीं चाहिए।"

उत्तर मिला- "ठीक है साहब।" फसल जब तैयार हो गई, पक गई, तब गाँव के किसानों ने जाकर कहा- "हुजूर हमने खेत में आलू बोए हैं और फसल तैयार हो चुकी है, आप सर्वे कर लीजिए।" वे सर्वे के लिए पहुँचे, लेकिन खेतों में कहीं पर भी पौधों में आलू लगे हुए नहीं देखे। आलू तो उसने बाजार में देखे थे, घर में आलू का साग खाया था, इसलिए वह जानता था कि आलू कैसा होता है। पर गांव में एक भी खेत में पौधों पर आलू लगे हुए नहीं देखे। वह कहने लगा, "मूर्खों, यह क्या बदतमीजी है ? यह क्या मजाक कर रहे हो ? कहते हो कि फसल पक गई, फसल तैयार है, पर अभी आलू तो आए ही नहीं हैं, आलू तो पौधों पर लगे ही नहीं हैं।" किसान बेचारे माथा पकड़कर बैठ गए कि यह मूर्ख है या हम हैं, किसको मूर्ख मानें ? जब ऐसा पढा-लिखा मूर्ख सामने आ जाए तो क्या किया जाए ? किसी ने हिम्मत करके कहा कि हुजूर पौधों पर आलू नहीं आते हैं। आलू तो जमीन में होते हैं। ऐसे लोगों के पी.ए. ही उनके काम चला पाते हैं।

मैने सुना है कि भारत के प्रधानमंत्री राजीव गांधी ने अपने भाषण में एक बार कहा था कि लाल मिर्च की कमी हो गई है इसलिए आप अपने खेतों में लाल मिर्च बोएं। उन्हें पता ही नहीं था कि लाल मिर्च कब आती है। क्या लाल मिर्च की खेती अलग होती है ? खेती तो हरी मिर्च की ही होती है। आपको पता है, लेकिन भारत के प्रधानमंत्री को पता नहीं था।

एक बार स्वामी विवेकानंद विदेशों में व्याख्यान कर रहे थे, उनसे एक स्टूडेन्ट ने कहा कि मैं एक प्रश्न पूछना चाहता हूँ। उन्होंने कहा

PDF Compressor Free Version

कि पूछो। उसने पूछा– ''क्या आप सबकुछ जानते हैं ?'' एक क्षण विवेकानन्द रुके। दूसरे क्षण उन्होंने जवाब दिया– नहीं, मैं सबकुछ नहीं जानता। वे भांप गए थे कि यदि मैंने कह दिया कि मैं सबकुछ जानता हूँ तो स्टूडेन्ट का अगला प्रश्न होगा कि हल कैसे चलाया जाता है ? विवेकानन्द ने कहा कि यदि आप मुझसे पूछ लें कि हल कैसे चलाया जाता है ? खेती कैसे की जाती है ? तो यह मैं नहीं जानता, किन्तु यदि आप मुझसे वेद की कोई बात पूछते हैं, तो उस सम्बन्ध में मेरा अधिकार है, मैं उस सम्बन्ध में बता सकता हूँ। जरूरी नहीं है कि एक व्यक्ति सबकुछ जान ले और यह सम्भव भी नहीं है। यह सम्भव हो सकता है सर्वज्ञ की अवस्था में। नहीं तो गौतम स्वामी आनन्द श्रावक के घर गए और उसको दर्शन दिया। आनन्द श्रावक ने कहा– ''मुझे अवधिज्ञान हो गया है, मैं चूल हिमवंत पर्वत तक देख रहा हूँ।'' गौतम स्वामी ने कहा– ''आनन्द, इसकी आलोचना कर। तुम संथारे में चल रहे हो, संलेखणा में चल रहे हो, मिथ्या बात नहीं कहना। श्रावक को अवधिज्ञान हो सकता है, किन्तु इतना विशाल अवधिज्ञान नहीं हो सकता।'' आनन्द ने पूछा– ''जिनशासन में आलोचना सत्य की होती है या असत्य की ?'' उत्तर मिला– ''असत्य की होती है। यथार्थ की आलोचना नहीं होती है, अयथार्थ की होती है।" तो उसने कहा कि भगवान, इस विषय की आलोचना आप कीजिए। गौतम स्वामी भगवान के पास पहुँचे। भगवान महावीर ने आनन्द की बात को सत्य बताया और गौतम से कहा कि तुम्हें आनन्द से क्षमायाचना करनी चाहिए। गौतम स्वामी ने आलोचना भी की और क्षमायाचना के लिए भी पहुँचे। कहने का आशय है कि एक व्यक्ति सम्पूर्ण ज्ञान का अधिकारी नहीं होता है, जब तक कि सर्वज्ञ नहीं बन जाए, क्योंकि कहीं-न-कहीं, कोई-न-कोई अवस्था तो उससे छुपी हुई रहती ही है। इसीलिए तो औदायिक भाव रूप अज्ञान बारहवें गुणस्थान में भी हमारी आत्मा के साथ लगा रहता है। बारहवें गुणस्थान में आत्मा ज्ञानी होती है। पर अज्ञान भी उसमें होता है। ज्ञानावरणीय कर्म के उदय से जो ज्ञान ढका हुआ है, वह अज्ञान है। जो ज्ञान प्रकट नहीं हुआ है, वह भी अज्ञान है और जो विपरीत ज्ञान है, वह भी अज्ञान है। अल्पज्ञान भी अज्ञान कहा जाता है। औदायिक भाव रूपी अज्ञान वीतराग अवस्था में भी मौजूद

PDF Compressor Free Version

रहता है। तेरहवें गुणस्थान में अज्ञान रंचमात्र भी मौजूद नहीं रह पाता है। इसलिए सर्वांश का ज्ञान सर्वज्ञ को हो सकता है। वीतराग को भी नहीं। ग्यारहवें बारहवें गुणस्थान वाले वीतराग तो हैं, पर सर्वज्ञ नहीं हैं। इसलिए सर्वज्ञता के अभाव में कोई व्यक्ति पूर्ण ज्ञाता नहीं हो सकता। स्वामी विवेकानंद ने कह दिया कि मैं सबकुछ नहीं जानता, वेद की बात आप यदि मुझसे पूछें तो मैं बता सकता हूँ, लेकिन आप खेती की बात पूछें, हल चलाने की बात पूछें तो मैं नहीं बता सकता। यदि कोई खेत का अधिकारी है, कृषि अधिकारी है तो उसे कृषि का, खेती का ज्ञान होना चाहिए, यदि उसे इनका अच्छा ज्ञान नहीं है और उसे ऐसे किसी महकमे में स्थापित कर दिया जाए तो ऐसी स्थापना कभी-कभी दु:खदायी हो जाती है, इसलिए चिंतन करने की आवश्यकता है।

कृष्ण वासुदेव स्वयं कहते हैं कि मेरे अन्दर वह संयम प्रकट क्यों नहीं होता है तो भगवान अरिष्टनेमि बताते हैं कि तुम्हारे भीतर ताकत जरूर है, लेकिन तुम ताकत को गिरवी रख चुके हो। गिरवी रखना जानते हैं ? एक चीज तुम्हारी है, लेकिन गिरवी रखी हुई है। गिरवी रखी हुई चीज यद्यपि तुम्हारी है, किन्तु फिर भी तुम उसका उपयोग कर पाओगे कि नहीं कर पाओगे, यह तय नहीं है। कृष्ण वासुदेव की वह शक्ति तो गिरवी रखी हुई थी, किन्तु तुम्हारी शक्ति तो तुमने गिरवी रख नहीं रखी है। फिर तुम अपनी उस शक्ति का प्रयोग क्यों नहीं कर सकते ?

यदि संयम के लिए अभी शक्ति जागृत नहीं है तो उसकी दलाली तो कर ही सकते हैं। कृष्ण वासुदेव ने धर्म की दलाली की थी।

'करी धर्म दलाली, गौत्र तीर्थंकर बांध्यो कानजी।'

बन्धुओं ! देखिए, कृष्ण महाराज, जो साधु नहीं बन सके, किन्तु धर्म-दलाली करके उन्होंने क्या प्राप्त कर लिया ? साधु ही नहीं, आने वाले समय में साधुओं के सिरमौर बनेंगे; देव ही नहीं देवाधिदेव बनेंगे। किस कारण से ? धर्म दलाली के कारण से। हमारे मुँह से आवाज ही नहीं निकल रही है। क्या सभी पंचोले करके बैठे हैं ? पंचोले करके बैठे हैं तो मैं नहीं बुलाऊंगा, लेकिन सबने नाश्ता किया है कि नहीं ? थोड़ा-सा बोलोगे तो पेट हल्का हो जाएगा। पेट हल्का हो जाएगा तो एकासना, आयम्बिल भी करेंगे तो वह भी हो जाएगा, दो रोटी कम खाकर

PDF Compressor Free Version

काम चला तो ऊनोदरी का लाभ हो जाएगा। भूख के बिना दो रोटी कम खाऐंगे तो ऊनोदरी नहीं है, भूख कम है तो उससे भी कम खाएंगे तो ऊनोदरी का लाभ मिल जाएगा। अन्य कुछ भी नहीं हुआ तो गुणीजनों के गुण गाने से कर्म-निर्जरा का लाभ तो मिल ही सकता है। उत्कृष्ट रसायन आ जाए तो भावी तीर्थंकर का पद भी मिल सकता है।

बंधुओ ! कृष्ण वासुदेव के मन की भावना और धर्म-भावना इतनी प्रबल हो गई कि उन्होंने कुछ कर डालने का संकल्प कर लिया। वे सोचने लगे कि मैं यदि साधु नहीं बन सकता तो दूसरों का हित तो कर ही सकता हूँ। मैं मिठाई नहीं खा सकता, लेकिन मेरे हाथों से दूसरे को मिठाई खिलाई तो जा सकती है।

एक बार देव-दानव सारे एक साथ मिल गए। दानवों ने भी देवों का रूप बना लिया और उनके साथ घुलमिल गए। अब देव सोचने लगे- क्या करें, कैसे दानवों को पहचानें और कैसे उन्हें निकालें ? आज अगर बांग्लादेश के शरणार्थी भारत के नागरिक बनकर रहने लगें तो उनकी अब कैसे पहचान हो ? वे लाखों की संख्या में बाहर से आकर भारत में रह रहे हैं, उनकी पहचान नहीं हो पाती है। वैसे ही देवों के साथ दानव मिल गए और उनकी पहचान मुश्किल हो गई। तो वे पहुँच गए ब्रह्माजी के पास और कहने लगे कि हमारी रक्षा कीजिए, नहीं तो हम मारे जाएंगे। वे हमारी इज्जत-आबरू लूट लेंगे, हमारी धन-सम्पत्ति और हमारे अधिकार लूट लेंगे। ब्रह्माजी ने उन्हें आश्वस्त किया और कहा- सारी व्यवस्था हो जाएगी। उन्होंने एक बहुत बड़े भोज का आयोजन किया। देव तथा दानव सब एक साथ बैठ गए। वे एक-दूसरे के सामने, एक-दूसरे की ओर मुँह करके बैठ गए। सबके हाथों में बांस के डंडे बांध दिए गए, जिससे उनके हाथ मुड़ें नहीं। थाली में तरह-तरह के व्यंजन परोस दिए गए। सभी के सामने समस्या उत्पन्न हो गई। खाएं तो कैसे खाएँ ? कहते हैं, जो देव थे उनके मन में आया कि स्वयं नहीं खा सकते तो क्या हो गया, दूसरे को तो खिला सकते हैं। इधर वाले ने उधर वाले के मुँह में और उधर वाले ने इधर वाले के मुँह में निवाला दिया। इस प्रकार जो देव थे वे तो भोजन करके उठ गए और जो दानव थे वे भूखे रह गए। बस, उनकी पहचान हो गई। वैसे ही अगर आप भी देव बनना चाहते हो तो समझ लो

PDF Compressor Free Version

कि खाने वाला व्यक्ति एकाएक देव बने या नहीं, लेकिन खिलाने वाला देव बन सकता है। हमारा सिद्धान्त भी खिलाने में विश्वास करता है। आपके बारहवें व्रत में अतिथि संविभाग की बात कही गई है। वह मुख्यत: साधु के लिए कही हुई है, लेकिन केवल साधु की नहीं है। अगर इसका दृष्टांत या शास्त्रीय प्रमाण चाहिए तो तुंगिया नगरी के श्रावकों का वर्णन उठाकर देख लीजिए। उसमें बतलाया गया है कि तुंगिया नगरी के श्रावकों के द्वार दान के लिए खुले रहते थे। कोई भी गरीब याचक उनके यहाँ आ सकता था। वह खाली नहीं लौटता था। आज अगर कोई आ जाए तो भीतर से ही आवाज आएगी कि निकल-निकल। पहली बात तो उसे घर में ही नहीं घुसने देंगे और यदि घुस भी गया तो उसे निकलने को बाध्य किया जाएगा। भगवान महावीर के युग में भी ऐसी घटनाएँ घटी हैं। भगवान महावीर शालिभद्र मुनि से कहते हैं- "तुम तुम्हारी माँ के हाथ का पारणा करोगे और तब उन्होंने सोचा कि जब माँ के हाथ का ही पारणा करना है तो फिर इधर-उधर क्यों घूमें, सीधे माँ के पास ही पहुँचो।" यदि कथा याद नहीं है तो सुन लीजिए। शालिभद्र को जिस माता के घर में पाला-पोसा गया था और जिस घर में उसने ऐश्वर्य का अनुभव किया, उसी माता भद्रा के द्वार पर वे पहुँचते हैं। जिस समय वह शालिभद्र था उस समय उसके शरीर की रौनक कुछ और ही थी, परन्तु जब उसने साधु बनकर, तपस्या करके शरीर से ममत्व को समाप्त कर दिया और कर्मों के आवरण को विदीर्ण करने में लग गया तब उसका शरीर शुष्क काष्ठ जैसा बन गया था इसलिए अब जब वह वहाँ पहुँचा तो द्वारपालों ने उन्हें रोक दिया। कहा- अंदर कहाँ जा रहे हो ? अन्दर प्रवेश निषेध है। जो शालिभद्र एक समय उस घर का स्वामी रहा हुआ था, आज उसे उसके द्वारपालों ने रोक दिया। उस समय शालिभद्र मुनि को यह कहना चाहिए था कि क्या समझता है तू अपने-आप को ? तू जानता है मैं कौन हूँ ? लेकिन शलिभद्र के मन में ऐसी भावना नहीं आई। भगवान ने कहा था कि माँ के हाथ का पारणा होगा। भगवान के प्रति श्रद्धा थी। इसलिए सोच नहीं पा रहे थे कि आगे चले या नहीं चले। कई कथाओं में ऐसा भी आया है कि दूसरी बार प्रयोग करते हैं और दूसरी बार भी धक्का खाते हैं। यानी दूसरी बार भी भीतर प्रवेश नहीं हो पाता है। तब सोचते हैं कि

PDF Compressor Free Version

बार-बार जाना ठीक नहीं है। फिर दूसरी बार भी क्यों गए ? भगवान ने कहा था कि तुम्हारे माँ के हाथ का पारणा होगा। इसलिए चले गए, पर बार-बार जाना उचित नहीं लगा। जब वे लौटने लगे तब रास्ते में एक ग्वालन मिली। वह मुनि से कहने लगी- "कैसा मुझे योग मिला है !, मेरे हाथ में गौरस है, आप कृपा करें।" उन्होंने सोचा कि माँ के भरोसे रहे तो इसकी भावना को पूरा नहीं कर पाएँगे, इसकी भावना को पूरा करना भी आवश्यक है। अत: उन्होंने वहीं पातरे रखे और भिक्षा ले ली। फिर भगवान महावीर के पास चले गए। भगवान ने पूछा- शालिभद्र, क्या तुम्हारे मन में यह विचार आया था कि भगवान ने कहा था कि माँ के हाथ का पारणा होगा और मुझे तो ग्वालिन के हाथ का दूध मिला है ? फिर उन्होंने बताया कि वह ग्वालिन पूर्वभव में तुम्हारी माता रही है। उस ग्वालिन के यहाँ तुमने जन्म लिया था, वहाँ से शालिभद्र बने। वह पूर्वभव की माता है और उसी के हाथ से तुम्हारा पारणा हुआ है। इस प्रकार बड़े-बड़े सेठों के यहाँ तो द्वारपाल रास्ता रोककर खड़े हो जाते हैं, पर सामान्य व्यक्ति के यहाँ पारणा हो जाता है। वे सेठ इस लाभ से भी वंचित रह जाते हैं और छोटे लोग लाभ उठा लेते हैं जैसे एक ग्वालिन को पुण्य मिल गया था।

बात समझने की है। कृष्ण वासुदेव ने विचार कर लिया कि मैं स्वयं तो मिठाई नहीं खा सकता हूँ पर दूसरों को तो खिला सकता हूँ। उन्होंने उद्घोषणा करा दी कि कोई भी व्यक्ति, स्त्री या पुरुष, यदि वह संयम स्वीकार करना चाहता है और उसे किसी प्रकार की कोई अड़चन है तो वह घबराए नहीं, उसकी अड़चन मैं दूर करूँगा। यदि किसी के पिता वृद्ध हैं और उनकी सेवा के लिए उसकी आवश्यकता है तो उनकी सेवा की जवाबदारी मेरे ऊपर है। किसी का अबोध बालक है और उसको चिन्ता है कि उसकी देख-रेख कौन करेगा, तो उसकी जवाबदारी भी मेरे ऊपर है। मैं उसकी देख-रेख करूँगा, मैं ध्यान रखूंगा कि उसकी पढाई-लिखाई की उचित व्यवस्था हो और बाद में उसके धन्धे-व्यापार की जवाबदारी भी मेरी रहेगी। यदि किसी की सास बीमार है और बहू दीक्षा लेती है तो उसकी सास की व्यवस्था भी मैं करूँगा और उसकी रोटी की व्यवस्था भी मैं करूँगा। कोई किसी अड़चन के कारण संयम

PDF Compressor Free Version

लेने में रुक रहा हो तो वह रुके नहीं, मैं उसकी सभी अड़चनें दूर कर दूँगा, वह संयम स्वीकार करे। कृष्ण वासुदेव की इस घोषणा से संतुष्ट होकर बहुत-सारे व्यक्तियों ने अरिष्टनेमि भगवान के चरणों में संयम स्वीकार किया। यह बात औरों तक ही सीमित नहीं रही। कृष्ण वासुदेव की महारानियाँ, अग्रमहिषियाँ और पटरानियाँ भी संयम लेने की भावना से कृष्ण वासुदेव के पास पहुँची। हालांकि उनका उनके प्रति बड़ा अनन्य भाव था, चाहे वह सत्यभामा हो, रुक्मणि हो, पद्मावती हो या और कोई हो। शास्त्रकार स्वयं कहते हैं कि कृष्ण वासुदेव अरिष्टनेमि भगवान से कहते हैं कि भगवान यह पद्मावती है। इसका नाम गौत्र-स्मरण ही दुर्लभ है, दर्शन तो और भी दुर्लभ हैं। जिसका नाम भी सुनने को नहीं मिले, ऐसी यह पद्मावती है। कृष्ण वासुदेव को उससे असीम प्यार था, किन्तु फिर भी जब वह संयम स्वीकारने की तैयारी में आ जाती है तो कृष्ण वासुदेव मोह के पलीते और कर्मों के आवरण के बंधन में नहीं आते अपितु कहते हैं- अहा सुहं देवाणुप्पिया। तुमने साधु बनने का पक्का विचार कर लिया है तो मेरी तरफ से तुम्हें आज्ञा है। बोलिए कौन-कौन आगे बढ रहा है ? आज प्रयोग कर लीजिए कि आज जो व्यक्ति यहाँ पौषद्य, संवर, दया में रह जाएंगे और उनकी श्रीमतियां यहीं हों, जो घर की मालकिन हों, तो यहाँ उनसे बात कर लेना और वे बहनें श्रावकों से बात कर लें और घर पहुँचे तो कम से कम यह विचार कर लें कि या तो तुम मुझे आज्ञा दे दो नहीं तो मैं तुम्हें आज्ञा दे दूँगी। कम से कम आज आप घर के सदस्य से यह कह देना कि कोई भी दीक्षा लेना चाहे तो मेरी स्वीकृति है।

बंधुओ ! ध्यान रखियेगा, बहनें साक्षात् शक्ति हैं। यदि वे विचार कर लें और मन में संकल्प कर लें कि आपको संतों के यहाँ दर्शन करने जाना है तो क्या आप रुक सकते हैं ? रतनबाईजी सेठिया, जो राजेशमुनिजी की संसारपक्षीय दादीजी हैं, उन्होंने संकल्प कर लिया कि जब तक पूरा परिवार एक साथ में दर्शन नहीं करेगा तब तक मैं घी नहीं खाऊंगी। जहाँ तक मैं भूल नहीं पा रहा हूँ, अजमेर में संकल्प किया था, किन्तु अहमदाबाद में पूरे परिवार के सदस्य गए और अनूपचंदजी ने तो 16 वर्ष के बाद दर्शन किए। उन्होंने संकल्प कर लिया था कि जब तक पूरे

PDF Compressor Free Version

परिवार के सदस्य एक साथ दर्शन नहीं करेंगे तब तक मैं घी नहीं खाऊंगी। तब जिन लोगों ने 16-16 साल से दर्शन नहीं किए थे, उनको भी दर्शन करने पड़े। ये बहनें विचार कर लें तो ऐसा हो सकता है और यदि इनके विचार कागजी रह जाएं तो बात अलग है। कृष्ण वासुदेव ने भी अपनी तरह से धर्म-दलाली का काम किया था। जब द्वारिका-विनाश की बात आई कि द्वारिका का विनाश होगा तो कृष्ण वासुदेव ने कहा कि विनाश होगा, इसलिए जिसको भी दीक्षा लेनी है, वह ले ले।

आपको यह याद होगा कि एक बार यह खबर फैल गई थी कि 9 ग्रह एक साथ हो रहे हैं। लोगों में हड़कम्प मच गया था। लोगों के मन में कुशंकाएँ उत्पन्न होने लग गईं थीं। लोग डर कर इकट्ठे होने लग गए थे और दान, पुण्य, धर्म-ध्यान में लग गए थे। 9 ग्रह हों या नहीं हों, लेकिन 8 ग्रह तो रोज लगे हुए हैं। हमारे ऊपर 8 ग्रह तो लगे हुए ही हैं। 8 ग्रह लगे हुए हैं तो भी हम रोज जी रहे हैं। 8 कर्मरूपी ग्रह लगे हुए हैं और नौवां पैसा, धन-सम्पत्ति का ग्रह जोड़ लें तो मान लो कि नौवां ग्रह भी लग गया। वैसे मोह-ममता भी आ सकती है, इनको कोई नौवां ग्रह माने तो भले ही बात अलग है, आठ ग्रह तो हमारे साथ लगे हुए ही हैं। इन आठों ग्रहों के चलते हुए नौवें ग्रह को शान्त कर लें तो क्लिष्ट भाव, क्लिष्ट दुख हमारे जीवन में नहीं आएंगे। यदि इन आठों ग्रहों की संतुष्टि नहीं की, इनकी पूजा-अर्चना नहीं की, धर्म-ध्यान नहीं किया तो ये आठों ग्रह उदित होंगे और आपको उनका उदय भयंकर परेशानी में डाल सकता है। घर में क्लेश की स्थिति पैदा हो सकती है, जीवन खतरे में पड़ सकता है, न जाने कैसी स्थिति बन सकती है, इसलिए जागने की आवश्यकता है।

बन्धुओं ! द्वारिका के नष्ट होने में मुख्य कारण थी मदिरा, इसलिए कृष्ण वासुदेव ने पूरी तरह मदिरा बंद करवा दी थी, कोई भी व्यक्ति द्वारिका में मदिरा-पान नहीं कर सकता था, जितनी भी मदिरा थी, जंगल में फिंकवा दी गई थी। किन्तु कहा गया है- "होनहार टाली न जाई", होनहार होकर रहती है, उसका निमित्त कोई-न-कोई बन जाता है। कई राजकुमार एक बार जंगल में पहुँचे। वहाँ पर उनको बहुत भयंकर प्यास लगी और वह मदिरा, जो जंगल में फिंकवाई गई थी और जो

PDF Compressor Free Version

चट्टानों पर लग कर सूख चुकी थी, वर्षा के पानी से घुल-घुलकर पानी के साथ वर्षा से बने तालाब में पहुँच गई थी। राजकुमारों ने वह पानी देखा, वे प्यासे थे, पीया तो बहुत स्वादिष्ट लगा और लोगों ने भी वही पानी पीकर प्यास बुझाई। उसका प्रभाव तो होना ही था। फिर मदिरा जो पुरानी हो जाती है वह बहुत ज्यादा मादक बन जाती है, उसे तो अपना प्रभाव दिखाना ही था। कभी किसी व्यापारी का कोई कर्जा पुराना हो जाए तो क्या वह छूट जाएगा ? पुराना हो जाएगा तो और ब्याज बढ जाएगा, वैसे ही पुरानी शराब थी, उसने सबको मदोन्मत्त बना दिया। उसी मदोन्मत्त अवस्था में उन लोगों ने द्वैपायन ऋषि की मार-पिटाई कर दी और उन्हीं द्वैपायन ऋषि के कारण कालांतर में द्वारिका नगरी के विनाश का प्रसंग बना।

आज भी जितने अपराध बढ रहे हैं उसका एक कारण शराब भी है। आप देख लीजिए, यदि वे लोग मदिरा नहीं पिये हुए होते तो द्वैपायन ऋषि पर आक्रमण नहीं करते, उन पर अत्याचार नहीं करते, लेकिन मदिरा के कारण अपराध वृत्ति उत्पन्न हो गई, जो पूरी द्वारिका को ले डूबी।

बंधुओ ! विचार कर लेना, पान-पराग, गुटका, तम्बाकू, जर्दा आदि जहर ही हैं। कोई-कोई कहते हैं कि मैं ज्यादा नहीं खाता, दो-चार दाने ही मुँह में डालता हूँ। तो बन्धुओं, मुझे उन लोगों की अक्ल पर तरस आती है। कैसी है उन लोगों की अक्ल ? अपने ही पैसे खर्च करके अपने ही मुँह में जहर डाल रहे हैं ! यह कैसी वणिक बुद्धि है ? बनिया तो ऐसा काम नहीं करता है। लेकिन आज के व्यापारियों की क्या बात कहें ? यदि आहार की समीक्षा ही कर ली जाए तो भी विचार का प्रसंग बन जाएगा। मैं अभी सारे पन्ने नहीं पलटना चाहता, उन पन्नों को पलटने लग गया तो समय लग सकता है। मैं इस विषय में आगे नहीं बढना चाहता, किन्तु क्या करूँ, ऐसे विषय इन आठ दिनों में मुख्य रूप से विचार करने के हैं। ऐसे विषयों की विवेचना करना, जैसे मदिरापान, जिसके कारण पूरी द्वारिका नगरी का विनाश हो गया था, क्या भारत के हित में है ?

आज भारत की दशा बदल गई है। लोग संस्कारभ्रष्ट हो रहे हैं। कुविचार और कुव्यसन अपने पैर फैला चुके हैं। जीवनमूल्यों का विघटन

PDF Compressor Free Version

हो रहा है और आचार-विचार दूषित हो रहा है। बताया जाता है कि सती स्त्री श्रृंगार करती है तो केवल पति के लिए, पति की उपस्थिति में। पति की अनुपस्थिति में वह श्रृंगार नहीं सजाती है। किन्तु आज भारत की दशा ऐसी है कि पति यदि परदेश जाता है तो पीछे से पत्नी रगड़-रगड़ कर मुँह धोती है, अपने शरीर को धो-धो कर उजला बनाने की कोशिश करती है। यह समय का फेर है। समय के फेर से ही गौ की रक्षा करने वाले गौ-बेटी को बेच-बेच कर खा रहे हैं। श्रीकृष्ण वासुदेव ने कहा था कि कोई सुरा का सेवन नहीं करेगा, लेकिन आज भारत-भूमि में सुरा का प्रचार घर-घर और द्वार-द्वार हो रहा है। यह संतोष का विषय है कि जैन समाज आज भी इस कुव्यसन से बहुत-कुछ बचा हुआ है। कुछ प्रतिशत लोग हो सकते हैं जो सेवन करते हों। ऐसे लोगों के कारण पूरे समाज के बदनाम होने का प्रसंग रहता है। मैं सोचता हूँ कि यदि सर्वे किया जाए तो शराब पीने वाले और व्यसन करने वाले जैन समाज में नगण्य संख्या में मिलेंगे। यदि मिलेंगे भी तो 10 प्रतिशत से ज्यादा नहीं मिलेंगे जो सुरा-सुन्दरी और अन्य व्यसनों का सेवन करते हों। लोग 10 प्रतिशत बीमारी को देखते हैं, लेकिन 90 प्रतिशत गुणों को नहीं देखते हैं। 10 प्रतिशत के कारण हम अपना माथा नीचा कर लेते हैं, 90 प्रतिशत स्वस्थता के कारण अपने-आप को गौरवान्वित नहीं मान सकते हैं।

परन्तु यह चिन्ता का विषय है, क्योंकि यदि एक भी घुन लग जाता है, दीमक लग जाती है तो अन्य के लिए भी मार्ग खुल जाता है और चिंता का विषय बन जाता है पूरे परिवार को, पूरे समाज को बदनाम करने वाला बन सकता है। इसलिए बन्धुओं, सावधान रहें, जहाँ कहीं भी स्थिति ऐसी हो, किसी भी परिवार में, ऐसी कोई घटना हो, उसको आप अपने प्रयत्न से रोक न पाते हों तो आकर संतों के कान में धीरे-से इस बात को कह दें, लिख कर दे दें, संत प्रयत्न कर सकते हैं। अपने समझाने की शैली से उससे होने वाली हानियाँ उन्हें बता सकते हैं। उनके सामने उन हानियों का पूरा चित्रण किया जा सकता है। लेकिन कोई कहे कि मुझे तो पीनी ही है, तो उसको कोई रोक नहीं पाएगा, किन्तु फिर भी बचाव के कुछ उपाय तो आप कर ही सकते हैं। एक व्यक्ति सुधर जाता है तो उसकी मंडली के पाँच-पच्चीस व्यक्ति भी सुधर सकते हैं। ऐसा

PDF Compressor Free Version

एक व्यक्ति अपनी मंडली को सुधार लेता है। एक व्यक्ति से यदि शराब छुड़वाते हैं, माँसाहार का त्याग करवाते हैं, व्यसनों का त्याग करवाते हैं तो वह एक व्यक्ति ही त्याग नहीं करता, उसके प्रभाव से उसकी मण्डली भी धीरे-धीरे इन व्यसनों को छोड़ देती है। इसलिए प्रयत्न होना चाहिए कि जो भी दुर्व्यसनों के अन्दर फंसे हुए हों, उन्हें उनको छोड़ देने के लिए प्रोत्साहन दिया जाए, उनके दुर्व्यसनों को दूर करने का प्रयत्न किया जाए। यदि आप धर्म-ध्यान का काम अपने हाथ में लेते हैं तो यह भी कोई छोटा काम नहीं है, यह बहुत मुद्दे का काम है। परिवार, समाज और राष्ट्र ही नहीं, मानव के सुधार का, मानव-सेवा में योगदान देने वाला काम बनता है। मानवता की रक्षा में जिसने भी योगदान दिया है वह पुरुष तीर्थंकर नामकर्म रूपी पुण्य प्रकृति का उपार्जन करने वाला भी बन सकता है। बंधुओ ! ऐसे योगदान की हमारे पास में शक्ति है, हम में भी ताकत है। हम अपनी शक्ति का उपयोग करें और एक व्यसनमुक्त समाज और व्यसनमुक्त राष्ट्र के निर्माण का प्रयास करें।

मैं एक बार रतलाम में था। पत्रकार कहने लगे कि यदि व्यसन बंद हो जाएंगे, पान-पराग, गुटके आदि बंद हो जाएंगे तो सरकार को जो करोड़ों रुपयों का राजस्व मिलता है वह राजस्व मिलना भी बंद हो जाएगा। अब देखिए, हमारी सोच कितनी बौनी है, कैसी सोच हमारे अर्थशास्त्रियों की है ? क्या सोचते हैं वे ? जितना करोड़ रुपया इनसे राजस्व कमाते हैं उसके मुकाबले कैंसर पर, शोध पर कितना रूपया लगता है। जितना रुपया राजस्व में नहीं मिलता है, उससे अधिक रुपया कैंसर के शोध में आज तक खर्च हो चुका है और निरन्तर हो रहा है। 10 में से 9 व्यक्ति तम्बाकू के कारण गले के कैंसर के बीमार बन जाते हैं। एक तरफ राजस्व कमाना चाहते हैं तथा दूसरी तरफ उसी राजस्व को कैंसर के शोध में खर्च करते हैं। साथ ही लोगों को बीमार बनाए रखने की हिमायत भी करते हैं। यह कैसी सोच है हमारी ? कैसा हमारा पागलपन है ? हमारी मति कहाँ चली गई है ? बंधुओ ! इस स्थिति पर चिन्तन करने की आवश्यकता है। अपने प्रयत्न से इन व्यसनों को दूर करके समाज में नई चेतना, जागृति, नई क्रान्ति का यदि हमने शंखनाद किया तो हम वस्तुतः जिनशासन की और मानवता की सेवा करने वालों

PDF Compressor Free Version

के सिरमौर बनेंगे। एक-एक व्यक्ति यदि सोच ले और कम से कम 5 व्यक्तियों को व्यसनमुक्त करने में सामर्थ्य लगाए तो उन्हें व्यसनमुक्त करके वह अपने-आप में शान्ति का अनुभव करेगा। ऐसा यदि प्रत्येक व्यक्ति संकल्प ले तो बहुत बड़ी संख्या में व्यक्ति व्यसनमुक्त हो जाएं, उनकी जिन्दगी सुधरे, समाज में शान्ति आए और बहुत-सी बहनें, जो अन्दर से घुटन महसूस करती हैं, उनको शान्ति मिले। चिन्तन करें, मनन करें, जैसा भी हो, कोई संकल्प जरूर करें। आपके मन में सद्विचार होंगे, हृदय में सद्भाव होंगे और उद्देश्य मानव-सेवा होगा, तो निश्चित मानिए, आपका हित तो होगा ही, पर्युषण पर्व की आपकी आराधना भी सफल होगी। आराधना को सफल बनाने में एक बात का ख्याल अवश्य रखना चाहिए कि आध्यात्मिक साधना को भौतिक पदार्थों के लिए विक्रय नहीं करें, जैसे कि श्रीकृष्ण वासुदेव की आत्मा ने पूर्व के भव में की थी। जिसे आगमिक भाषा में निदान कहते हैं। इसी तरह आत्मिक साधना में किसी तरह के मान-सम्मान, यश, प्रतिष्ठा और वैभव आदि की कामना को भी नहीं जोड़ना चाहिए। तभी सच्ची आराधना हो सकेगी और आत्मशान्ति की सुन्दर-शीतल छांव प्राप्त हो सकेगी।

30.08.2000

❖ ❖ ❖

PDF Compressor Free Version

6. नष्ट प्रदूषण - सपफल पर्युषण

बहुत-से व्यक्ति अपने घर में अगरबत्ती लगाते हैं, मुँह में अगरबत्ती लगाने वाले भी बहुत मिलेंगे। मुँह में अगरबत्ती लगाने वालों का उद्देश्य भिन्न होता है और घर में अगरबत्ती लगाने वालों का उद्देश्य भिन्न होता है। अगरबत्ती पूजा के लिए भी लगाई जाती है, परन्तु एक अगरबत्ती है जो मच्छरों को भगाने के लिए लगाई जाती है। अगरबत्ती घर के प्रदूषण को तो दूर करती ही है, वातावारण को सुगन्धित भी बनाती है। अगरबत्तियाँ भिन्न-भिन्न प्रकार की हो सकती हैं और उनके उपयोग के भिन्न-भिन्न रूप हो सकते हैं, परन्तु आत्मा को भावित करने की अगरबत्ती कोई और ही होती है। आत्मा को भावित करने का तात्पर्य है अन्तर की मलिनता को दूर करना। क्षमा, मृदुता, स्वच्छता और सरलता की अगरबत्तियों से हमारा अंतर भावित होता है। क्षमा की, मृदुता की, स्वच्छता की और सरलता की अगरबत्तियाँ यदि लग जाएं तो देखिए हमारे भीतर का प्रदूषण कैसे समाप्त हो जाता है, कैसे वहाँ से उसकी सफाई हो जाती है। वस्तुतः हम जितना कुछ कहते हैं, जितना कुछ करना चाहते हैं, उतना करते नहीं हैं।

उत्तराध्ययन सूत्र में जीव के लक्षणों की चर्चा की गई है। ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप और वीर्य - इनको आत्मा का, जीव का लक्षण कहा गया है और उसी के साथ एक लक्षण कहा गया है उपयोग। उपयोग क्या है ? वैसे तो हम कहते हैं कि ज्ञान और दर्शन, ये ही उपयोग हैं, पर उपयोग के दूसरे प्रकार से भी दो भेद किए गए, वे हैं निराकार और साकार रूप। पर इसकी प्रवृत्ति क्या है ? जगत् में जितने भी पदार्थ हैं, विश्व की जितनी भी वस्तुएँ हैं, उन सब में दो धर्म रहे हुए हैं- एक सामान्य और दूसरा विशेष। इन दोनों को जानने के लिए आत्मा के पास दो शक्तियाँ हैं- साकार और निराकार। इन दो शक्तियों से ही हम सम्पूर्ण वस्तुस्तोम को जान पाते हैं। इसलिए हमारी कोई भी प्रवत्ति हो, वह

PDF Compressor Free Version

उपभोगपूर्वक होनी चाहिए। हम चलते कहीं हैं और हमारा मन-मस्तिष्क कहीं और होता है। हम कार्य जयपुर में कर रहे होते हैं और हमारा मन मुम्बई-कोलकाता की हवा ले रहा होता है। ऐसा भी होता है कि बैठे हुए हैं लाल भवन में किन्तु हमारा मन लाल भवन में नहीं, किसी और भवन में रुका हुआ है। जब तक हम इसकी सही-तरीके से जानकारी नहीं कर लेते और उसे भी साथ नहीं कर लेते, तब तक आत्मा को भावित करना संभव नहीं है। अंतगडदशासूत्र का पर्व पर्युषणों में श्रद्धालु भक्त आठ-साढ़े आठ बजे, जब भी समय रहता है, शांत भाव से श्रद्धापूर्वक श्रवण करने के इच्छुक रहते हैं और सुनते हैं। जैसे आज आपने अर्जुन माली से संबंधित वृत्तांत सुना। बाद में पूरी भूमिका भी सुनी। उन छहों गोठीले मित्रों के बारे में भी सुना कि उस फुलवारी में, उस बगीचे में, मन्दिर में बैठे दरवाजे की ओट में छिपे, वे छहों मित्र किस रूप में थे। उनके लिए शास्त्रकारों ने विशेषण दिए हैं- "मिथिला निश्चलाः ... निष्प्रकंप", कि वे निश्चल हो गए, शरीर में कोई हलचल नहीं रही। ऐसे छहों गोठीले मित्र वहाँ रुके हुए हैं और अर्जुन माली वहाँ पहुँचता है। जैसे ही वह अन्दर पहुँचा, उसे बांध लिया गया, उसका मुँह बांध लिया गया। बंधुमती भार्या के साथ उन्होने जो कुछ भी अनैतिक कार्य किया, जो व्यवहार किया वह भी आपने सुना और मुद्गल पारणी यक्ष कैसे प्रकट हुआ, अर्जुन माली के मन में क्या विचार बने और उन छः गोठीले मित्रों और बंधुमती भार्या को तत्काल वहीं समाप्त कर दिया गया या नहीं, ये सारी बातें आपने इस सूत्र से सुनी। कथा सुनने में वृत्तांत आते हैं, टी.वी. पर भी कथाएँ आती हैं, सिनेमाहॉल में भी कथाएँ देखते हैं, किताबों में भी कथाएँ पढ लेते हैं और कथा को पढकर बस, थोड़ी देर के लिए मन में रंजन कर लेते हैं, मन को प्रमोदित कर लेते हैं। मन में उस कथा से थोड़ा-सा आमोद-प्रमोद हो जाता है और कालान्तर में हम उस कथा को भूल जाते हैं। परन्तु चिन्तन कीजिए कि यह कथा केवल अर्जुनमाली की कथा नहीं है। इस कथा के माध्यम से हमें बोध मिलता है। प्रत्येक मनुष्य की, प्रत्येक प्राणी की आत्मा से संबंधित मूल अवस्थाओं का इसमें प्रदर्शन किया गया है। पाँच इन्द्रियाँ व मन, ये छः एक-दूसरे से संयुक्त होकर चलते हैं और ये संयुक्त रहते हैं। परन्तु इनके साथ यदि दुर्मति जुड़

PDF Compressor Free Version

जाए तो क्या दृश्य जीव आत्मा उपस्थित कर सकता है, यह चिन्तनीय है। उन गोठीले मित्रों से भी बढकर घटनाएँ हम अपने जीवन में घटित कर लेते हैं। दूसरे शब्दों में कहूँ तो काम, क्रोध, मद, मोह, तृष्णा और डाह, ये छः गोठीले मित्र हैं और दुर्बुद्धि बंधुमती भार्या है। जब तक ये छः गोठीले मित्र जुड़े रहते हैं, हमारे जीवन को परेशान करते रहते हैं। ये वैसे भी बड़े निष्ठुर होते हैं। ये हमें आभास नहीं होने देते और हम जान भी नहीं पाते कि हमारे भीतर काम कहाँ और क्रोध कहाँ है। दरवाजा भी खोलकर देखें क्या हमको अपने भीतर कहीं पर भी काम, क्रोध, मद, मोह, तृष्णा, डाह नजर आते हैं ? डॉक्टर शरीर के अवयवों का ऑपरेशन करते हैं फिर भी उन्हें काम, क्रोध, मद, मोह, तृष्णा, डाह, कहीं दृष्टिगत नहीं होते। ये बड़े निष्ठुर हैं, बड़े चालाक हैं, हमें कोई प्रबंधन भी नहीं करने देते, व्यवस्थित भी नहीं होने देते और जैसे वे छः गोठीले मित्र अर्जुनमाली के आते ही उस पर टूट पड़ते हैं, वैसे ही हमारे ये छः गोठीले मित्र जब एकदम सहसा धावा बोल देते हैं तो हम बेबस हो जाते हैं। इसीलिए कभी-कभी भाई कहते हैं- महाराज ! मैं चाहता हूँ मैं क्रोध नहीं करूँ, पर क्या करूँ ऐसा समय आ जाता है, पता ही नहीं पड़ने देता है, क्रोध आ जाता है, बाद में पछतावा भी बहुत होता है, किन्तु अब पछताए होत क्या जब चिड़ियाँ चुग गई खेत। पछताने से क्या होता है ? वह क्रोध हमारे भीतर की व्यवस्था को, हमारे भीतर की संपदा को जलाकर नष्ट कर देता है, हमारे भीतर की हरियाली को समाप्त कर देता है। जब आग लगी उस समय तो हम नहीं संभले और अब आग लगने के बाद जब सबकुछ स्वाहा हो गया तब हम विचार करते हैं कि यह कैसे हो गया। चोर, चोरी करके चला जाता है उसके बाद पुलिस केवल डंडा पटकती हुई आती है। तब क्या हो सकता है ? सर्प तो निकल गया, क्रोध भी आया और चला गया। अब केवल पछताने के अलावा कुछ भी मिलने वाला नहीं है, हानि जो हो गई वह तो बट्टे खाते गई। बस, पश्चात्ताप आपके जीवन के साथ जुड़ गया।

अहंकार की भी ऐसी ही बात है। हम नहीं समझ पाते हैं कि अहंकार के नाम और रूप कितने हैं। अनेक नाम बताए गए हैं इसके और

PDF Compressor Free Version

अनेक रूपों में इसका प्रकटीकरण होता है। उन सारे रूपों को भी हम जान नहीं पाते हैं और उस पर आवरण डालने की कोशिश करते हैं। यही नहीं, उसे सजाकर वस्त्र और आभूषणों से सुसज्जित करना चाहते हैं। परन्तु याद रखिए जब तक ऐसी दशाएँ बनी रहेंगी, तब तक हम अपनी आत्मा को भावित नहीं कर पाएंगे। आवश्यकता इस बात की है कि अर्जुन अणगार के इस प्रकरण से हम स्वयं की अवस्था का परिज्ञान करें।

प्रत्येक मनुष्य के भीतर दो प्रकार की शक्तियाँ होती हैं। एक तामसिक शक्ति और दूसरी सात्त्विक शक्ति। तामसिक शक्ति भी हमारे भीतर प्रकट होती है और वह सबसे पहले हमारे भीतर के पर्यावरण को दूषित करती है और जब हमारे भीतर का पर्यावरण दूषित हो जाता है, तब हम बाहर के पर्यावरण को दूषित करने लगते हैं। यह होता ऐसे है कि हम अपने भीतर स्वच्छता का संचार करने के लिए अपने अंतर के दूषित पर्यावरण की सारी की सारी अवस्था या उसका मलबा बाहर यत्र-तत्र फेंकने लगते हैं। परमाणु ऊर्जा संयंत्र, जिससे परमाणु ऊर्जा को संगृहीत किया जाता है, ऊर्जा उत्पादन के पश्चात् जो परमाणु कचरा इकट्ठा हो जाता है उससे भी बहुत परेशानी की स्थिति बन जाती है, इसलिए उस कचरे को यत्र-तत्र नहीं डाला जाता बल्कि सोचा जाता है कि इसको कहाँ पर डाला जाये ? हमारे भीतर भी इन वैकारिक प्रवृत्तियों से, वैभाविक अवस्थाओं के निर्माण के पश्चात् जो पर्यावरण दूषित होता है और उसके पश्चात् जो मलबा हमारे भीतर इकट्ठा हो जाता है, उस मलबे को बाहर कैसे विसर्जित करें, इसका चिन्तन किए बिना ही हम उस मलबे को बाहर फेंक देते हैं। वही मलबा बाहर आकर परिवार को विभाजित करवाता है, समाज को विभाजित करवाता है और भाई-भाई के मन में दरारें पैदा करवाता है। इस प्रकार वह मलबा बाहर के प्रदूषण को, बाहर के वातावरण को प्रदूषित बनाने का कारण बन जाता है। आज का विज्ञान खोज कर रहा है और वैज्ञानिक बड़े चिन्तित हो रहे हैं कि यदि यह बाह्य प्रदूषण, ऊर्जा संयंत्रों आदि के कारण से फैलने वाला इसी तरह से बढता गया तो आने वाले समय में मानव का जीवन खतरे में पड़ सकता है। जो इतनी-सारी गैसें आज छोड़ी जा रही हैं और जो उत्पादन के दौरान

PDF Compressor Free Version

निकलती हैं उनके कारण यह माना जा रहा है कि पृथ्वी और सूर्य के बीच में जो ओजोन परत है उसमें भी छिद्र हो गया है। परिणामस्वरूप सूर्य की पराबैंगनी किरणें जमीन पर आने लगी हैं। वे किरणें यदि सीधी आ जाएं तो मानव का जीवित रह पाना कठिन हो जाएगा और इस भूमि के जीव-जंतुओं का अस्तित्व खतरे में पड़ जाएगा।

कभी-कभी विचार चलता है कि भगवान महावीर 2500 वर्ष पहले जो बातें फरमा गए थे वे कितनी सच हैं ! उस सच को हम सामने देख रहे हैं। ओजोन की परत में धीरे-धीरे छोटे-छोटे छिद्र हो रहे हैं। यह परत यदि बीच में नहीं होगी तो शास्त्रकारों ने बतलाया है कि आग की वृष्टि होगी, आग बरसने लग जाएगी, आग के शोले पड़ेंगे, आग के गोले पड़ेंगे, आग के अंगारे पड़ेंगे। सूर्य की तेज किरणें इतनी प्रखर होंगीं कि उन किरणों को व्यक्ति सहन भी नहीं कर पाएगा और इसके लिए बतलाया गया है कि उस समय जब प्राणी बाहर खुले में नहीं रह पाएँगे तो वे गुफाओं के भीतर आश्रय लेकर रहेंगे।

बंधुओं ! हमें शास्त्रवाणी पर विश्वास करते हुए चिन्तन करने की आवश्यकता है कि हमारे भीतर का प्रदूषण बाहर फैलता हुआ अनेक प्रकार की गैसों के रूप में किस प्रकार से हमारी सुरक्षा छतरी में, समाज, परिवार और राष्ट्र रूपी हमारी ओजोन की छतरियों में छेद कर रहा है। हम यदि इस प्रकार अंदर के अपने प्रदूषण को बाहर फैलाकर परिवार की ओजोन छतरी पर वार करते हैं, समाज की ओजोन छतरी पर वार करते हैं तो कैसी विषम स्थिति उत्पन्न हो जाएगी ? राज्य रूपी ओजोन छतरी पर भी हमारे द्वारा निष्कासित, हमारे द्वारा बाहर फैलाया गया प्रदूषण पूरे परिवार, समाज और राष्ट्र के लिए एक विषम समस्या बन गया है, किन्तु फिर भी मनुष्य अपने भीतर के प्रदूषण को बाहर डालने से बाज नहीं आ रहा है, बल्कि निरन्तर अपने भीतर के कचरे को वह बाहर फैलाने में लगा हुआ है। जो इण्डस्ट्रियल एरिया है, उसमें बहुत प्रोडक्शन से हम खुश हो रहे हैं। हम गर्व करते हैं कि हमने बहुत-सारा प्रोडक्शन कर लिया है, किन्तु उसी प्रोडक्शन के फलस्वरूप जो गन्दा पानी उत्पन्न होता है, कैमिकल्स वाला जो विषैला पानी उत्पन्न हो रहा है वह कहाँ जा रहा है ? उसको कहाँ छोड़ा जा रहा है ? क्या इसे भी हम देख रहे हैं ? वह

PDF Compressor Free Version

पानी नदी और नालों में पहुँचता जा रहा है। उनमें बहाया जाने लगा है। यहाँ तक कि हमारी गंगा भी इतनी दूषित हो चुकी है कि उसे शुद्ध करने के लिए कई उपाय किए जा रहे हैं। पर हमारी गंगा कैसे शुद्ध होगी ? जब तक वह सारी गन्दगी और वह प्रदूषित पानी उसमें मिलता रहेगा तब तक औपचारिक रूप से आप सफाई करते रहिए, किन्तु वह रासायनिक पानी उसे लगातार गंदा करता रहेगा, उसकी गुणवत्ता समाप्त करता रहेगा। परिणामस्वरूप सफाई नहीं हो पाएगी।

हमारे भीतर के प्रदूषण ने परिवार और समाज की जो हालत बना दी है, उस कारण आज समाज को समाज कहने में शर्म आती है। आज समाज की कोई शर्म नहीं रह गई है, परिवार की कोई लज्जा नहीं रह गई है। एक छोटा-सा बालक भी जिस तरह अपने पापा के सामने और अपने से बड़ों के सामने से बदतमीजी से बोलने के लिए तैयार हो जाता है, उसे देखकर लज्जा ही नहीं, क्रोध आता है। समाज के बड़े-बुजुर्गों का कोई सम्मान नहीं रह गया है। आँख की शर्म आज न जाने कहाँ चली गई है ? दशवैकालिक सूत्र में लज्जा, दया, संयम और ब्रह्मचर्य के संबंध में बताया गया है कि जिसका ब्रह्मचर्य चला गया, जो साधना से विमुख हो गया उसे साधना में लगाया जा सकता है। यदि किसी का संयम चला गया, वह असंयम की प्रवृत्ति में रम गया तो उसे भी संयमी जीवन पर आरूढ किया जा सकता है। जिसके हृदय से दया चली गई, कालांतर में उसके हृदय में दया का दरिया भी वापस बहाया जा सकता है, किन्तु जिसके जीवन से लज्जा चली गई हो, निर्लज्ज हो गया हो, उसके जीवन में संयम के फूल खिलना, उसमें आध्यात्मिक सौरभ उत्पन्न होना असंभव नहीं तो कठिन अवश्य है।

आज जब हम समाज का परिदृश्य देखते हैं तो बहुत पीड़ा होती है। ऐसे व्यक्ति भी, जिनको सामाजिक रीति-नीति का ज्ञान तक नहीं है, वे व्यक्ति भी समाज के धरातल पर बांहें चढाने को तैयार हो जाते हैं। क्या वस्तुतः यही हमारे समाज का चरित्र रह गया है ? क्या यही सभ्य नागरिकता रह गई है ? राष्ट्र की स्थिति भी बड़ी विचित्र बनी हुई है और व्यक्ति यहाँ तक कहने लगे हैं कि लोकसभा और विधानसभाओं में अब

PDF Compressor Free Version

सभ्य व्यक्तियों के पहुँचने का समय नहीं रह गया है। यदि कोई सभ्य व्यक्ति पहुँचता भी है तो उसका दामन साफ रह पाना बड़ा कठिन हो गया है।

पूज्य गुरुदेव एक मार्मिक दृष्टांत फरमाया करते थे। एक बार एक ज्योतिषी ने एक सम्राट् से कह दिया कि राजन, आने वाला समय बड़ा भयावह है। छः महीने तक तो अवस्था ठीक है, इतने समय में जितना पानी आप एकत्र कर सकते हैं, करके रख लें, क्योंकि छः महीने के बाद जो वर्षा बरसेगी, वह व्यक्तियों को पागल बना देगी, मदहोश कर देगी। उस वर्षा का पानी जो पी लेगा वह आपा खो देगा। सम्राट् ने पानी की व्यवस्था करवाई। जनता से कह दिया कि आने वाली वर्षा का पानी नहीं पीएं। किन्तु आप जानते हैं कि यदि किसी विषय का निषेध कर दिया जाता है तो उसके संबंध में और अधिक उत्कंठा जागती है। लोग सोचते हैं कि जरूर कोई-न-कोई राज है। ऐसी ही बात तब हुई। लोग सोचने लगे कि सम्राट् ने क्यों मना कर दिया है, पानी पीने में क्या गलत है ? एक व्यक्ति के मन में यह दुर्बुद्धि उपजी और कहते हैं कि विनाशकाले विपरीत बुद्धि - जब व्यक्ति का विनाश नजदीक होता है तब उसकी बुद्धि भी विपरीत हो जाती है, उसकी मति पलटा खा जाती है, चाहे वह कितना भी विद्वान् हो। पर एक दिन उसकी मति भी उसे धोखा दे जाती है। सम्राट के आदेश के संबंध में संशयशील उस व्यक्ति ने सोचा कि जरा चखकर तो देखूँ। उसने पानी चखा, वह बहुत मीठा था, स्वादिष्ट था। उसने निष्कर्ष निकाला कि राजा इसीलिए मना कर रहे थे, जिससे कि ऐसे स्वादिष्ट पानी को पीने से लोग वंचित रह जाएं। उसने दूसरे से कहा, दूसरे ने तीसरे से कहा, तीसरे ने चौथे से कहा। इस प्रकार बात धीरे-धीरे सब में फैल गई और सबने थोड़ा-थोड़ा जल चखा। सबको पानी स्वादिष्ट लगा। परिणामस्वरूप उन लोगों ने वह पानी पीना शुरू कर दिया। जिन-जिन लोगों ने पानी पीया था उनके भीतर हरकतें होने लगीं और वे दूसरों को भी पानी पिलाते हुए चले गए। जैसे कोई भांग पीने वाला होता है तो वह दूसरों को भी भांग पिलाने की कोशिश करता है। एक शराबी व्यक्ति दूसरों को भी शराब पीने के लिए आमंत्रित करता है।

PDF Compressor Free Version

बीड़ी पीने वालों को ही देख लीजिए, खुद भी बीड़ी पीएंगे, दूसरों को भी बीड़ी पिलायेंगे। पास में यदि चार जने बैठे हों तो एक व्यक्ति कश खींचकर दूसरे की और बढ़ा देगा, दूसरा भी कश खींचेगा ओर तीसरे की तरफ बढ़ा देगा, तीसरा चौथे को देगा।

एक बार आचार्यदेव बाबरा गांव में विराज रहे थे, वहाँ शराब पीने की चर्चा चल पड़ी। वहाँ बहुत-से राजपूत भाई भी आते थे। एक राजपूत भाई आया और कहने लगा कि महाराज हम तो सौगंध ले लें, किन्तु विवाह-शादी में जहाँ जाते हैं, वहाँ तो हमको शराब पीनी ही पड़ती है। वहाँ पर हमें झटका लगाना पड़ता है। वहाँ यदि कह दें कि हम नहीं लगाते हैं तो हमें लज्जित और प्रताड़ित किया जाता है। मर्दभेदी शब्दों के बाण हम पर चलाए जाते हैं। यहाँ तक कह दिया जाता है कि यह हिंजड़ा है, इसमें वह पौरुष कहाँ कि यह शराब पी सके, बकरे पर झटका लगा सके। उस स्थिति को हम सह नहीं सकते इसलिए आप विवाह-शादी की छूट रखकर बाकी समय कि सौगन्ध हमें दिला दिजिए। देखिए की कैसी-कैसी अवस्थाएँ आती हैं ? इन सब बातों को शायद आज हम गहराई से नहीं ले रहे हैं, किन्तु आने वाला समय बताएगा, जब हमारा नाम इतिहास में स्वर्ण अक्षरों में नहीं, काले रंग की पुताई के साथ लिखा जाएगा। तब आने वाली पीढियाँ देखेंगी कि हमारे पूर्वजों ने क्या-क्या किया था। बंधुओ ! संभल जाइए और अपने मन के प्रदूषण को परिवार और समाज के भीतर घोलने का प्रयत्न मत कीजिए। ऐसे प्रदूषण को आप, महावीर भगवान ने जो विधि बताई है, उस विधि के अनुसार समाप्त कर सकते हैं।

आज भी परमाणु भट्टियों का मलबा इधर-उधर नहीं फेंका जाता है। उसके लिए भी बताया जाता है कि हजारों फीट गहरी सुरंग खोदकर उसके भीतर उस परमाणु मलबे को डलवाने की व्यवस्था की जा रही है ताकि उस मलबे से होने वाली हानि से मानव-समाज और प्राणि-जगत् को मुक्त रखा जा सके। वैसे ही भगवान महावीर ने इस मलबे को समाप्त करने के लिए हमारे सामने मार्ग प्रशस्त किया है। अपने भीतर के मलबे को हम कहाँ दफनाएं, कैसे दफनाएं, उसकी व्यवस्था क्या है ? विधि

PDF Compressor Free Version

क्या है ? उसके लिए हमारे सामने तीन सूत्र आते हैं। ये तीन सूत्र हैं- आलोचना, निन्दा और गर्हा। आलोचना के माध्यम से, निन्दा के माध्यम से और गर्हा के माध्यम से, इन तीनों माध्यमों से अपने भीतर के प्रदूषण को इतना गला दो, इतना पिघला दो, इस तरह रूपान्तरित कर दो कि उसकी प्रकृति ही बदल जाए। फिर यदि वह बाहर आ भी जाए तो भी वह प्रदूषण फैलाने वाला नहीं हो, परन्तु इसके लिए बड़ा मनोबल और साहस होना चाहिए।

आलोचना, निन्दा और गर्हा का उत्कृष्ट रूप पारांचित प्रायश्चित्त में देखा जा सकता है। उसे दशवां प्रायश्चित्त कहा गया है। जो कोई दृढ मनोबली ही वहन कर सकता है। आज उस प्रायश्चित्त को वहन करना तो दूर की बात है, जो सामान्य प्रायश्चित्त है उसको भी वहन करना बड़ा कठिन हो जाता है। हम तुलना करने लगते हैं कि उसको कम प्रायश्चित्त दिया, मुझे इतना कैसे दे दिया ? मुझे अधिक क्यों दे दिया ? बुखार यदि 104 डिग्री हो और स्थिति को देखते हुए वैद्य एक को कड़वी गोली दे और दूसरे को मीठी गोली दे और हम सोचने लगें कि ऐसा क्यों हो गया, एक को कड़वी दवा दी और दूसरे को मीठी दवा दी, तो यह हमारी कैसी नासमझी होगी। क्योंकि बुखार एक ही प्रकार का नहीं होता। एक बुखार मलेरिया का होता है, तो दूसरा वायरल का। इसी प्रकार बुखार टायफाइडजन्य, टी.बी. एवं इन्फेक्शन से भी हो सकता है। इसलिए बुखार भले ही 104 डिग्री के रूप में समान हो, किन्तु उसके कारण की भिन्नता होने से औषधि में भिन्नता आ गई। इसी तरह अपराध भले ही एक समान हो, किन्तु उसमें कारण रूप भाव भिन्न-भिन्न होने से प्रायश्चित्त में भिन्नता आ जाती है।

तीन अपराधियों के समान अपराध के लिए एक सम्राट ने अलग-अलग दंड दिए। एक को उपालम्भ देते हुए कहा कि तू ऐसा क्यों करता है ? दूसरे को देश निकाला दे दिया और तीसरे को गधे पर बिठाकर नगर में घुमाया जाकर फाँसी पर चढाने का दण्ड सुनाया। लोगों को आश्चर्य हुआ। किसी ने हिम्मत करके सम्राट् से पूछ लिया- राजन्, बात क्या है ? आप तो दूध का दूध और पानी का पानी करने वाले हैं। आप न्याय के सिंहासन पर बैठने वाले हैं, आपने एक जैसे अपराध के

PDF Compressor Free Version

लिए तीन व्यक्तियों को अलग-अलग दण्ड क्यों दिए ? तो सम्राट् ने कहा कि 24 घण्टे बाद मुझसे बात करना। पहले 24 घण्टे बाद उन तीनों व्यक्तियों की खोज-खबर कर लेना कि वे कहाँ हैं और क्या कर रहे हैं। जब 24 घण्टे के बाद जानकारी की गई तो पता चला कि पहला व्यक्ति तो मारे शर्म के स्वयं आत्महत्या कर लेता है। दूसरे व्यक्ति ने भी आत्महत्या का प्रयास किया था। तब सम्राट् ने स्पष्ट किया कि देख लो कैसे एक व्यक्ति को धिक्कारना ही उसके लिए कठोर दण्ड हो गया, उसके लिए इतना उपालम्भ ही असहनीय हो गया। पानीदार व्यक्ति तो इतना-सा उपालम्भ भी सहन करने की स्थिति में नहीं होता। ऐसा व्यक्ति कोई गलती करता नहीं सहसा, यदि किसी कारण से गलती हो जाए तो थोड़ा-सा प्रायश्चित्त भी उसके लिए बड़ा पीड़ादायक बन जाता है। अब बात हमारे समझ में आ गई होगी कि भले ही अपराध की ऊपर से समानता हो, किन्तु उसके कारण भिन्न हो सकते हैं। दण्ड केवल अपराध का ही नहीं होता, उसके पीछे रहे हुए कारण को जानकर दण्ड दिया जाता है। महासती मृगावती की थोड़ी-सी गलती के कारण उन्हें जो उपालम्भ मिला था, उससे प्रतिफलित आत्मग्लानि, आलोचना और निन्दना रूपी तप से उन्होंने अपने भीतर के सारे प्रदूषण को समाप्त कर लिया था।

पहले अपराधी एवं मृगावती को उपालम्भ ही पर्याप्त था। आज हम स्वयं में अनुभव करें कि यदि हमारी गलती भी हो और कोई हमें उपालम्भ दे तो हमारी क्या स्थिति बनेगी ? हम अपने भीतर के प्रदूषण को गलाने का, नष्ट करने का प्रयत्न करेंगे या उस प्रदूषण को और अधिक बाहर फैलाने का कार्य करेंगे ?

बन्धुओं ! हम जप-तप कितना ही कर लें, पर जब तक प्रदूषण को गलाने का नष्ट करने का हमारा लक्ष्य नहीं होगा तब तक सारे जप-तप व्यर्थ हैं। यदि किसी प्रकार की कोई शंका हो तो यथास्थान समाधान पाना चाहिए। जहाँ समाधान मिल सकता है, वहाँ नहीं जा सकते हो तो तुम्हें समाधान नहीं मिल सकता। वहाँ नहीं पहुँचकर बाजार में तुम क्या समाधान पाओगे ? बाजार में गली-कूँचों में पहुँचकर क्या समाधान कर लोगे ? वस्तुतः मति जब भ्रष्ट हो जाती है तो वह समाधान

PDF Compressor Free Version

नहीं करना चाहती है। तब वह समाज में प्रदूषण ही फैलाना चाहती है। चाहे हम इस प्रदूषण का विरोध करें, किन्तु इससे हम इस प्रदूषण को समाप्त नहीं कर पाएंगे। कितने व्यक्ति हैं जो तैयार हैं कि हम अपने प्रदूषण को समाज में नहीं फैलाएंगे, परिवार में नहीं फैलाएंगे ? "नमो अरिहंताणं" तपस्या करना बड़ा सरल है, किन्तु अपने अन्तर के प्रदूषण को समाप्त करना इतना आसान नहीं है।

मैं आपको अर्जुन एवं सेठ सुदर्शन की कथा सुना रहा था। लेकिन क्या हम अपनी कथा को सुन-पढ पाते हैं। अजीब स्थिति है, अपनी कथा पढने का तो समय हमारे पास नहीं है, लेकिन दुनिया की कथा को पढने के लिए हमारे पास समय है। दुनिया की कथाओं से भी हम अपना मनोरंजन जरूर कर लेते हैं, किन्तु आत्मरंजन, आत्म-संशोधन की प्रक्रिया से हम नहीं गुजरते हैं। होना यह चाहिए कि बाहर की कथा-रूप दर्पण को देखकर हम अन्दर का संशोधन करें, किन्तु ऐसा हम नहीं करते हैं। हम भाव से बाहर की हिस्ट्री को सुन लेते हैं और बाहर के सारे काम-धाम के अनुरूप अपनी स्थिति को संवार लेते हैं, किन्तु अपने अंतर की हिस्ट्री नहीं पढते, उसके अनुसार सुधार नहीं करते।

अर्जुन माली छः गोठिले मित्र एवं बंधुमती भार्या को समाप्त करके ही नहीं रुका, अब वह प्रतिदिन छः पुरुष और एक स्त्री की घात करने लगा। उसका आक्रोश शान्त नहीं हो रहा था। उसका आतंक राजगृह में फैल चुका था। उसकी आतंकी हरकत सम्राट् भी काबू में नहीं कर पाए, परिणामस्वरूप मगध सम्राट् ने कह दिया कि नगर के दरवाजे बंद कर दो। जब काम, क्रोध, मद, मोह - इन सारों का संगठन बन जाता है तब आत्मा बेबस हो जाती है। आत्मा बेबस हो जाती है तो उसको भान ही नहीं रहता है, तब यह बचाव नहीं कर पाती है, किन्तु सेठ सुदर्शन जैसा किसी का विवेक हो तो बात अलग है। उसने तो कह दिया कि मुझे तो दर्शन करने जाना है। वह तो महावीर के दर्शन करने जा रहा है। पर विचार कर लीजिए कि इस दरवाजे के बाहर कोई ऐसी घटना हो और पता चले कि रामनिवास बाग में कोई पूज्य व्यक्ति आए हुए हैं तो जयपुर के कितने लोग दर्शन करने जाएंगे ?

PDF Compressor Free Version

बन्धुओं ! सेठ सुदर्शन नहीं जाता है। जितने मुँह उतनी बातें भी होती हैं, पर बातों पर नहीं, अपने लक्ष्य को लक्षित करता है। अर्जुन दौड़ा आता है। सेठ सागारी संथारा कर लेता। मुद्गरपाणी यक्ष टिक नहीं पाता। उसके जाते ही अर्जुन धड़ाम से धरणी पर गिर पड़ता है। होश आने पर सुदर्शन से पूछता है– आप कौन हैं ? सेठ कहता है कि मैं श्रमणोपासक हूँ। उसने पूछा– आप कहाँ जा रहे हैं सुदर्शन ने बताया– मैं श्रमण भगवान महावीर के दर्शन करने जा रहा हूँ। तब अर्जुन कहता है– क्या मैं चल सकता हूँ ? सुदर्शन उसे साथ ले भगवान के दर्शन हेतु पहुँचा। भगवान की देशना सुन अर्जुन का अंतर जागृत हो चुका। उसने अपने सारे प्रदूषण को गला दिया। उसने अपने अंतर मन को सुवासित करने के लिए क्षमा की अगरबत्ती लगा ली। परिणामस्वरूप उसकी आत्मा परमात्मा बन गई।

पर्व पर्युषण के पावन दिनों में पवित्र आत्माओं के जीवन–वृत्तांत सुनकर हमें भी अपने भीतर के सारे प्रदूषण को गलाकर नष्ट करने का प्रयास करना चाहिए। अर्जुन अणगार की बात आज ही आपने सुनी है। दीक्षा लेने के पश्चात् उनके समक्ष परीषह आया। कोई गाली देता है, तो कोई प्रहार कर देता है कि यह तो वही है जिसने मेरे भाई को, भतीजे को मारा था। एक दिन, दो दिन नहीं, छः माह तक वह परीषह सहता रहा और अपने भीतर के प्रदूषण को गलाकर अन्तर में सुवास भरता रहा। आज ऐसी स्थिति आ जाए तो कहेंगे, गुरुदेव कब तक सुनें ? सुनने की भी एक सीमा हो सकती है। यदि हमारा धैर्य ही सीमित हो तो सुनने की भी एक सीमा होती है। अन्यथा सुनाने वाला नहीं थकता हो तो सुनने वाले को क्यों थकना ? अर्थात् अपना धैर्य इतना विकसित हो जाए तो वह सुनाने वाले से ओछा नहीं पड़े। इस प्रकार से यदि पर्व पर्युषण से जीवन संवार सकें तो हमारा पर्युषण मनाना सार्थक हो सकता है।

सारांश यह है कि नष्ट प्रदूषण सफल पर्युषण।

31.08.2000

❖ ❖ ❖

PDF Compressor Free Version

7. श्रेष्ठ श्रोता - बने उपभोक्ता

पर्युषण पर्व का आज सातवां दिवस है और कल संवत्सरी महापर्व का पूर्व दिवस है। जब शिविर लगता है तब उसके प्रारम्भ होते ही अध्ययन कार्य सुचारु रूप से चलने लगता है और जिस दिन शिविर का समापन होता है उसके पहले दिन परीक्षा ले ली जाती है, ताकि परिणाम देने में सुविधा रहे। वैसे ही आज हमारी परीक्षा का दिन है। छह: दिनो में हमने आत्मा के लक्षणों के सम्बन्ध में सुना है-

नाणं च दंसणं च चरित्तं च तवो तहा।
वीरियं उवओगोय एयं जीवस्स लक्खणं।।

ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप, वीर्य और उपयोग -ये जीव के लक्षण हैं। इन लक्षणों के माध्यम से हमने अपनी पहचान किस रूप में की, कितनी की, यह परीक्षा का विषय है। लक्षणों के रहते हुए भी यदि हम अपनी पहचान नहीं कर सके; अध्ययन बहुत किया, किन्तु समझ में कुछ नहीं आया तो उस अध्ययन का क्या लाभ हुआ ? कोई निरंतर अध्ययन भले ही करे, किन्तु विषय को समझ ही नहीं सके तो आप जानते हैं कि वह यदि परीक्षा में बैठे तो वह परीक्षा में क्या प्राप्त कर सकता है, परीक्षा से वह क्या हासिल कर सकता है ? वह उत्तीर्ण नहीं हो सकता। उत्तीर्ण होने के लिए अध्ययन करना ही पर्याप्त नहीं होता, विषय को समझना भी अनिवार्य होता है। अभी हमारी आदत अध्ययन करने की है। विषय को हम समझें या नहीं समझें, यह सोचे बिना अध्ययन करते हुए चले जाते हैं क्योंकि हम यह मानकर चलते हैं कि हमें कोई परीक्षा देनी ही नहीं है। जहाँ परीक्षा का संबंध जुड़ा हुआ है वहाँ व्यक्ति अध्ययन के साथ विषय को समझने का प्रयत्न भी करता है। यदि स्कूल में अध्ययन करते हुए विद्यार्थी विषय को नहीं समझ पाया हो तो वह क्या करता है ? यदि वह स्कूल में अध्ययन करते हुए भी विषय को समझ न सके तो वह ट्यूशन करता है और ट्यूशन करके वह विषय को समझने का प्रयत्न

PDF Compressor Free Version

करता है, ताकि रिजल्ट सही आ जाए। उसे रिजल्ट की चिन्ता होती है, अच्छे रिजल्ट की उसे आवश्यकता होती है। हमें रिजल्ट की कोई अपेक्षा नहीं है। एक दृष्टि से यह बात अच्छी भी है। रिजल्ट प्राप्त करने के लिए व्यक्ति अध्ययन करता है, जरूरी नहीं कि उसका वह अध्ययन ठोस हो जाए। वह केवल औपचारिक रूप से भी अध्ययन करके रिजल्ट प्राप्त कर लेता है। किन्तु अध्ययन तो खूब करे, फिर भी विषय को नहीं समझे तो वह व्यक्ति भी अध्ययन को ठोस नहीं कर सकता। अध्ययन वही श्रेष्ठ माना गया है, जिसमें विषय इस प्रकार दिमाग में बैठ जाए कि अध्ययनकर्ता दूसरे को वापस अध्ययन करा सके। यदि दूसरे को अध्ययन कराने की क्षमता हासिल हो गई तो कहना पड़ेगा कि उसने अध्ययन किया है, उसने उस विषय को हृदयंगम भी किया है। बिना हृदयंगम किए गए विषय को दूसरे व्यक्ति को अध्ययन करवाना बड़ा कठिन काम है।

आपकी यदि परीक्षा ली जाए और एक-एक को खड़ा कर कहा जाए कि छह दिनो में उसने जो-कुछ भी सुना और सुनने के साथ उसे जिस रूप में हृदयंगम किया, जिस प्रकार की भी अनुभूति उसने की, उससे अन्य व्यक्तियों को भी लाभान्वित करे, उस अनुभूति से दूसरों को भी बोध दे। छह दिनों में सुने हुए विषय को अपनी अनुभूति के साथ प्रस्तुत करे और वह ऐसा कर पाए तब ही वर्तमान युग में कहा जा सकता है कि उसने अध्ययन किया है। "वर्तमान" विशेषण जो मैंने लगाया है, उसके पीछे क्या कारण है ?

राजा भोज के जमाने में ऐसे-ऐसे रत्न मौजूद थे एक बार जो बात सुन लेते थे उसे हूबहू पुनः प्रस्तुत कर सकते थे। ऐसी भी विभूतियाँ थीं जो दो बार सुनकर पूरे विषय को उसी प्रकार प्रस्तुत कर सकती थीं। तीन बार, चार बार, पाँच बार सुन कर वैसा का वैसा ही पुनः प्रस्तुत करने वाली विभूतियाँ भी थीं। किन्तु वर्तमान में ऐसी विभूतियाँ विरल ही होंगी जो एक बार, दो बार या तीन बार सुनकर पूर्णतया, एक भी अक्षर, एक भी शब्द की अदला-बदली किए बिना अथवा बिना कोई परिवर्तन किए बात को वैसा का वैसा ही प्रस्तुत कर सकें। कहा जाता है कि भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉक्टर राजेन्द्रप्रसाद कांग्रेस के एक अधिवेशन में सम्मिलित

PDF Compressor Free Version

हुए थे। प्रथम दिन की जो रिर्पार्ट तैयार की गई थी उसको दूसरे दिन खुले अधिवेशन में प्रस्तुत करना था। रिपोर्ट तैयार हो गई, किन्तु संयोग की बात थी कि वह रिपोर्ट गुम हो गई। उसकी डुप्लीकेट कॉपी भी नहीं थी। कर्मचारीगण परेशान हो गए कि अब क्या किया जाए ! बड़ी खोज की गई, पर रिपोर्ट नहीं मिल पाई। तब डॉ. राजेन्द्रप्रसाद से हाथ जोड़कर, सिर नवाकर, संकोच करते हुए उन्होंने कहा कि साहब रिपोर्ट गुम हो गई है। इस पर डॉ. राजेन्द्रप्रसाद ने कहा- चिन्ता करने की कोई बात नहीं है, आपने वह रिपोर्ट मुझे पढने के लिए दी थी, मैंने उस रिपोर्ट को पूरा पढा था। यदि वह रिपोर्ट नहीं मिल रही है तो बैठो, मैं लिखा देता हूँ। इस प्रकार डॉ. राजेन्द्रप्रसादजी ने वह रिपोर्ट पूरी की पूरी लिखवा दी। इधर रिपोर्ट लिखाने का कार्य पूर्ण हुआ, उधर एक व्यक्ति दौड़ा हुआ आया और बताया कि वह रिपोर्ट मिल गई है। दोनों रिपोर्ट जब सामने आ गईं तब व्यक्तियों के मन में उत्सुकता जगी कि पूर्व की रिपोर्ट मिल गई है और इधर डॉ. राजेन्द्रप्रसादजी ने जो रिपोर्ट लिखायी है, इन दोनों का मिलान कर लिया जाये। जब दोनों का मिलान किया गया तो लोगों को आश्चर्य हुआ कि दोनों रिपोर्ट एक जैसी थीं। डॉ. राजेन्द्रप्रसाद ने तो केवल एक बार उस रिपोर्ट को पढा था, फिर भी शब्दशः उसको पुनः लिखवा दिया था। वर्तमान में ऐसी विभूतियों का दर्शन कठिन हो गया है। ऐसे श्रोता दृष्टिगत नहीं हो पाते हैं। यदि कोई प्रतिभा दर्शाए तो वस्तुतः प्रसन्नता की बात होगी।

बन्धुओं ! मैं बतला रहा था कि हमारा अध्ययन कैसा होना चाहिए। परीक्षा में रिजल्ट लाने मात्र से जीवन नहीं बन जाता। अध्ययन कर लिया, परीक्षा में बहुत अच्छे अंकों से उत्तीर्ण हो गए, इतने मात्र से हमें संतुष्टि नहीं होनी चाहिए। संतुष्टि तब होती है जब वह विषय पूर्णतया हृदयंगम हो गया हो और जीवन में आचरण करने योग्य बन गया हो।

द्रोणाचार्य विद्यार्थियों को पाठ पढा रहे थे कि क्रोध नहीं करना चाहिए, क्रोध मत करो। जब उस पाठ को पुनः सुनाने का उन्होंने आदेश दिया तो एक-एक राजकुमार ने धड़ाधड़ से उस पाठ को सुना दिया और कह दिया- हमने इसको कंठस्थ कर लिया है। जब युधिष्ठिर का नम्बर

PDF Compressor Free Version

आया तब युधिष्ठिर ने कहा- गुरुदेव, मुझे अभी पाठ याद नहीं हुआ है। तब द्रोणाचार्य ने कहा- अरे, तुम तो बड़े राजकुमार हो, तुमसे तो कितनी ही आशाएँ लगी हुई हैं, पर तुम्हें एक छोटा-सा पाठ भी याद नहीं हुआ है, ऐसे कैसे काम चलेगा ? उस दिन केवल उपालम्भ देकर छोड़ दिया। दूसरे दिन जब पुनः पूछा तो फिर वही उत्तर मिला- गुरुदेव अभी पूरा याद नहीं हुआ है। द्रोणाचार्य थोड़े आक्रोशित हुए और कहा- युधिष्ठिर, यह मैं क्या सुन रहा हूँ ? तुम एक छोटा-सा पाठ याद नहीं कर पाए हो। क्या करते हो घर में ? क्या सारे दिन उधम मचाते हो ? यदि यह पाठ कल याद नहीं हुआ तो फिर खैर नहीं है। तीसरे दिन जब पुनः पूछा गया तब फिर युधिष्ठिर ने कहा कि गुरुदेव, पूरा याद नहीं हुआ है। तब द्रोणाचार्य ने वहीं चांटा जड़ दिया और चांटा पड़ने के साथ ही युधिष्ठिर ने कहा- गुरुदेव, मुझे पाठ याद हो गया। ऐसे अध्ययन करने वाले कितने व्यक्ति होते हैं ? द्रोणाचार्य की कक्षा में विद्यार्थी तो बहुत थे, किन्तु युधिष्ठिर जैसा विद्यार्थी एक ही था। ऐसे ही धर्मसभा में श्रोता तो बहुत होते हैं, किन्तु उपभोक्ता बहुत कम होते हैं।

उपभोक्ता जानते हैं कौन होता है ? उपभोक्ता किसको कहते हैं ? ग्रहण करने वाले को, खाने वाले को, उपयोग करने वाले को उपभोक्ता कहते हैं। आप यह मत समझ लेना कि यह पंचम आरा है इसलिए उपभोक्ता नहीं है। चौथे आरे में भी जितने श्रोता होते थे, उतने उपभोक्ता नहीं होते थे। सुनने वाले कितने होते थे ? भगवान महावीर की पहली सभा में श्रोताओं की कमी नहीं थी, किन्तु उपभोक्ता कितने निकले ? एक भी नहीं। भगवान महावीर की प्रथम देशना के समय श्रोता भरे हुए, किन्तु उपभोक्ता नहीं। बाद की सभाओं में उपभोक्ता जरूर रहे, किन्तु श्रोताओं की संख्या सदा अधिक ही रही और उपभोक्ताओं की संख्या कम रही। इसलिए उपभोक्ताओं की जीवनचर्या और उनके जीवन का दर्शन इस पर्व पर्युषण के दिनों में आपके सामने विभिन्न तरीकों से प्रस्तुत किया जा रहा है - चाहे वे अरिष्टनेमि भगवान के समय के उपभोक्ता हों, चाहे भगवान महावीर के समय के। बहुत-सारे उपभोक्ता वैभव में पले, अनेक रमणियों के साथ जिन्होंने शादी की, किन्तु नाक के श्लेष्म

PDF Compressor Free Version

के समान, उस सारे वैभव को तत्काल फेंककर, सबकुछ छोड़कर उन्होंने प्रभु की शरण को प्राप्त कर लिया। आपने यह भी सुना है कि गजसुकुमाल जैसा राजकुमार, जो देवकी की आँखों का तारा था, जिसको एक क्षण भी देवकी महारानी अपनी आँखों से ओझल नहीं करना चाहती थी, जो अभी यौवन में प्रवेश करने की तैयारी कर रहा था, माता, पिता, भ्राता उसके बारे में क्या-क्या विचार संजो रहे थे और कृष्ण महाराज, वे तो उसकी शादी के लिए कन्याओं को एकत्र करने में लगे हुए थे। किन्तु उस प्रवेश पाती हुई जवानी में वे गजसुकुमाल, जिन्होंने कभी जमीन पर, पैर नहीं रखा होगा, वे भी बढ चले इस कंटाकाकीर्ण संयम-पथ पर। गुलाब कांटों में ही खिलते हैं और जब परीषह-उपसर्ग आते हैं तभी संयम में चमक आती है, तभी उस संयम की परीक्षा होती है, तभी कसौटी होती है त्याग और वैराग्य की। त्याग और प्रत्याख्यान एक व्यक्ति लेकर चलता है; यदि उपसर्ग के समय में भी वह व्रत पर दृढ रहता है, अडिग रहता है, तब ही उसे परीक्षा में उत्तीर्ण माना जाता है। साधुओं को ही उपसर्ग नहीं आते हैं, श्रावकों के जीवन में भी अनेक उपसर्ग आते हैं। उन उपसर्गों के क्षणों में व्यक्ति स्वयं कितना धैर्य रख पाता है, यह महत्त्वपूर्ण है। शांतक्रान्ति के अग्रदूत आचार्य पूज्यश्री गणेशीलालजी महाराज के पिताश्री साहिबलालजी पौषध लिए हुए थे, तभी घर से सूचना आई कि उनकी पुत्री का वियोग हो गया, परन्तु वे अपने पौषध में तल्लीन रहे। यहाँ पर भी भीमरावजी साहब सुराणा, जिनकी पत्नी का परसों एक्सीडेन्ट हुआ, हड्डी फ्रेक्चर हो गई और उन्होंने पौषध लिया ही था, घंटे-दो घंटे का समय हुआ होगा, परिवार का और कोई सदस्य नहीं, उन्होंने शायद मूथाजी से परामर्श किया होगा कि क्या किया जाए ? मूथाजी मुझे पूछने लगे क्या करना चाहिए उनको ? मैं बताऊं कि क्या करना चाहिए उनको ? यह मुझे बताने की क्यों आवश्यकता पड़ गई ? क्या जयपुर संघ जवाबदारी का निर्वाह नहीं कर सकता है ? उनको पौषध में हलचल ही क्यों हो ? मूथाजी समझ गए। वे आए और सुराणाजी को कहते हैं कि आप निश्चिंत रहिए। आप अपने पौषध में रहें। आप पौषध बनाकर रखिए। संघ समाज बहुत बड़ा है और वे अपने-आप में धैर्य से उस पौषध

PDF Compressor Free Version

में लगे रहे। संघ, समाज ने अपना दायित्व निर्वाह किया। ऐसे अवसर मिलते कहाँ हैं ? पूज्य गुरुदेव फरमाया करते थे कि बगड़ी में धारीवाल परिवार के श्रावक लक्ष्मीचंदजी, जिन्होंने चातुर्मास करवाया। आचार्य पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज का, आचार्य पूज्यश्री गणेशीलालजी महाराज का और उन्होंने ही रायपुर में आचार्यश्री नानालालजी महाराज का चातुर्मास करवाया था, किन्तु बगड़ी की एक घटना मैं बताऊं। एक भाई को हैजे की बीमारी हो गई। सेठ और सेठानी स्वयं उसकी सेवा में जुट गए। यह नहीं कि नौकर के भरोसे छोड़ दिया। उन्होंने स्वयं उस बीमार को संभाला। ऐसे सेवा सजाने वाले विरले ही श्रावक होते है।

यह जयपुर जौहरियों की नगरी है, किन्तु यहाँ भी प्रसंग आने पर बड़े-बड़े श्रावकों ने, बड़े-बड़े घरों के युवाओं ने आगे बढकर पूरी जवाबदारी संभाली और अपनी स्थिति के अनुसार साधार्मिक सेवा की।

बन्धुओं ! कभी हम सोच लेते हैं कि हम ऐसे आरम्भ-सभारम्भ में क्यों पड़ें ? पर्व पर्युषण चल रहा है, हमें तो संवर करना है, पौषध करना है। यह सोचने की बात है कि किस समय कौन से दायित्व का निर्वाह करना है। स्वाध्याय साधु-जीवन का एक प्रमुख कर्त्तव्य माना गया है, किन्तु उसके लिए भी शास्त्रकार सूचना करते हैं कि जैसे ही सूर्योदय होता है, शिष्य को चाहिए, साधु को चाहिए कि गुरु महाराज को वंदना-नमस्कार करे और वंदना-नमस्कार करते हुए निवेदन करे कि भंते ! मैं किस कार्य में संयुक्त होऊं ? मुझे कोई सेवा या वैयावृत्य का कार्य करना है या स्वाध्याय का कार्य करना है ? मैं कौनसे कार्य में अपने-आप को लगाऊं ? गुरु महाराज यदि कोई सेवा-वैयावृत्य का कार्य सौंपें तो अग्लान भाव से, मन में उतार-चढाव लाए बिना, मन में ग्लानि लाए बिना कि अरे ! मुझे ऐसा ओछा काम सौंप दिया ! और भी बहुत-से साधु थे, मैं तो पढा लिखा हूँ और मुझे स्वाध्याय रस ज्यादा आता है। मेरा स्वाध्याय छूट जाएगा। मन में यदि ऐसा उतार-चढाव रखकर वह सेवा करता है तो वह सेवा के लाभ से अपने-आप को वंचित रखता है। क्योंकि तब उसकी काया तो सेवा में लगी हुई होती है, किन्तु उसका मन सेवा में नहीं लगा हुआ होता है। ऐसा व्यक्ति, ऐसा साधक अपनी साधना

PDF Compressor Free Version

में प्रवीण नहीं हो सकता। यदि गुरु महाराज ने किसी रुग्ण की सेवा में लगा दिया और मान लो, उसके शरीर से रस्सी या पीप झर रहा है, उसे दस्त लग रही हैं, उसके मुँह से लार पड़ रही है, तो भी ऐसे रुग्ण साधु को भी अग्लान भाव से संभालना, उसकी सेवा करना और मन में किसी प्रकार का उतार-चढाव नहीं लाना। यदि ऐसी स्थिति बनती है तो समझना चाहिए कि उस साधक की साधना सम्यक् गति से आगे बढ़ी है और यदि ऐसे समय में कोई मुँह मोड़ता है, कोई ऊँचा-नीचा विचार करता है, काम को टालने की कोशिश करता है, सोचता है कि मैं यदि सामने रहूंगा तो ऐसे साधु की सेवा मुझे सौंप देंगे, अतः कोई दूसरा नियुक्त हो जाए, उसके बाद गुरुजी के सामने आऊं तो मेरा बचाव हो जाएगा, ऐसा सोच करके चलता है या टालमटोल करता है तो वह अपने साधु-जीवन को धूमिल करने वाला होता है, उसकी साधना सफल नहीं हो सकती। हमारे मन में समभाव की आराधना कैसे बनेगी ? चाहे कैसा ही निकृष्ट से निकृष्ट कार्य हो (हम जिसको निकृष्ट मानते हैं वस्तुतः वह निकृष्ट नहीं होता), उस कार्य को करने वाला अपने-आप में महान् बनता है। केवल फूलों की शय्या सोना ही महानता का प्रतीक नहीं है, समय पर रणभेरी बजे तब शस्त्रों को लेकर वीरों की अग्र कतार में खड़ा होना महानता का प्रतीक होता है। बहुत-से सम्राट् फूलों की शय्या पर सोने वाले होते थे, किन्तु वे समय पर फूलों की शय्या को छोड़कर कंटकाकीर्ण भूमि पर भी नग्न पैरों से चलने के लिए तत्पर रहते थे। इसलिए वे महान् हुए। मर्यादा पुरुषोत्तम राम का हम स्मरण क्यों करते हैं ? क्या वे अयोध्या के राजा बनने वाले थे इसलिए ? नहीं, उन्होंने अयोध्या के राज्य को छोड़कर जंगलों की, वनों की धूल अपने पैरों से छानी थी और जनजागरण का अभियान चलाया था। इसलिए आज मर्यादा पुरुषोत्तम के रूप में उनके नाम का स्मरण किया जाता है।

तो बन्धुओं ! चिन्तन करने की आवश्यकता है कि केवल श्रोता बनने से काम नहीं चलेगा। परीक्षा वह होती है जिसमें उपभोक्ता के रूप में हमारी उपस्थिति दर्ज हो। यदि हम सुन रहे हैं कि कषाय नहीं करना है तो समय आने पर हम अपने-आप में उपशम भाव को कैसे बनाए

PDF Compressor Free Version

रखते हैं, इससे हमारी परीक्षा हो पाएगी। किसी ने गाली दे दी, उस समय भी आप दीवार की भांति, पृथ्वी की भांति अडिग बने रहें तो समझा जाएगा कि वस्तुतः आप केवल श्रोता नहीं हैं, बल्कि उपभोक्ता हैं। शास्त्रकार कहते हैं- पूढवी समो मुणि हविज्जा। मुनि को पृथ्वी के समान होना चाहिए। क्या होना चाहिए? पृथ्वी ! क्या जड़ हो जाए ? जड़ नहीं होना है। आपके चेतन होते हुए भी, सामर्थ्य होते हुए भी यदि कोई अपमान कर दे, तिरस्कार कर दे, गाली दे दे तो भी संयम बनाए रखें, क्रोध न आने दें और क्षमाशील बने रहें। भगवान महावीर कहते हैं कि हे साधक यदि तुमने भी प्रतिकार करने का सोचा और यह नीति अपनाई कि जो मेरे साथ जैसा व्यवहार करता है मैं भी उसके साथ वैसा ही व्यवहार करूँगा और ईंट का जवाब पत्थर से दूँगा, तो तुम भी अज्ञानी के समान उनके सरीखे हो गए हो। फिर तुम्हारी क्षमता कहाँ गई ? वह तो मूढ था ही और तुमने भी मूढता में उससे दो कदम बढाए तो तुमने साधना करके पाया क्या ? तुमने क्या अपने जीवन को उन्नत बनाया ? इसलिए बन्धुओं ! यदि आप श्रोता हैं तो केवल श्रोता ही नहीं बने रहें, उपभोक्ता बनने की तैयारी भी करें और यदि आप उपभोक्ता हैं तो सात दिन या एक महीने प्रयोग कीजिए कि कोई व्यक्ति आपको कुछ भी कह दे, चाहे कितनी भी गलत बात कह दे, किन्तु फिर भी आपके मन में उस व्यक्ति के प्रति कोई द्वेष की भावना नहीं आए। आप में द्वेष की झलक भी दिखाई नहीं दे। अपने-आप में आप पूर्णतया आत्मनिष्ठ बनकर रहें। फिर देखिए कि आनन्द की कैसी लहर आती है और कैसी तृप्ति मिलती है। आप देखेंगे कि जब कोई मेरा प्रतिकार करता था और मैं भी उसका प्रतिकार करने में लग जाता था, कोई मेरा तिरस्कार करता था और मैं भी उसको अपमानित करने की सोचता था, उसमें जो आनन्द नहीं आ रहा था वह आनन्द अब आ रहा है।

एक बार एक सेठ ने पंचों की जाजम से अनुनय की कि मैं पूरी जाति को भोज कराना चाहता हूँ, पूरे समाज को जिमाना चाहता हूँ। पंचों ने अनुमति दे दी। उसने अच्छा भोजन बनवाया और मिठाईयाँ आज के तरीके से नहीं, पंचों की जो इजाजत हुई उसी के अनुसार मिठाईयाँ

PDF Compressor Free Version

बनवाईं। रसोई बनी और उसने बड़े आदर भाव से अपने समाज के, जाति के लोगों को भोजन करवाया। वह स्वयं भी परोसगारी में जुटा हुआ था। अंत में जब पापड़ की परोसगारी कर रहा था, तब परोसते-परोसते एक जगह पहुँचा और पापड़ परोसा। वह पापड़ टूटा हुआ था। खांडा था। सेठ पापड़ परोस कर आगे बढ गया, किन्तु जिसको परोसा गया था उसने विचार किया कि इतनी भरी जमात में मेरी इज्जत लूट ली। सबको अखण्ड पापड़ दिया और मुझे खाण्डा पापड़। उसको बात लग गई। व्यक्ति दूसरे के घर में खाण्डा पापड़ खाकर उठ जाते हैं, लेकिन सगे भाई के घर में खाण्डा पापड़ परोस दिया जाए तो वह बात बहुत गहरी लग जाती है। भले ही दूसरे के घर में टुकड़े-टुकड़े किए पापड़ खा लें, लेकिन भाई के घर में नहीं खा सकते। अपनों की बात ज्यादा लग जाती है। दूसरा पत्थर फेंक दे तो उसको सहन कर लेंगे, लेकिन जो नजदीक का व्यक्ति है यदि वह पत्थर फेंक दे, पत्थर फेंके नहीं, किन्तु केवल पत्थर खिसका दे और वह पत्थर आकर ऊपर पड़ जाए तो कहेगा कि मेरे ऊपर पत्थर फेंका है, चलाकर फेंका है। यह नहीं सोचेगा कि वह क्या दुश्मन है जो चलाकर फेंकेगा ? यदि चलाकर फेंक भी दिया तो क्या तू बदला ले लेगा ? क्या करेगा ? इतनी चोट लग गई और तू भी पत्थर फेंक देगा तो क्या तेरी शान बढ जाएगी ? कहा गया है- "क्षमा बड़न चाहिए छोटन को उत्पात।" तुमको क्षमाशील बनना चाहिए। छोटे उत्पात करते हैं तो वे भी बड़े बनेंगे तो उनको भी बड़ों की सीख लगेगी और वे अपने उत्पात को छोड़कर क्षमाशील बन जाएंगे, परन्तु यदि बड़े भी क्षमाशील नहीं बनेंगे और उत्पात करते रहेंगे तो छोटों से हम कैसे अपेक्षा रखें कि वे क्षमाशील बनेंगे ?

बंधुओ ! उस सेठ ने अपने मन में गाँठ बांध ली और कुछ ही दिनों के बाद पंचों को आमंत्रित किया और कहा कि मैं भी समाज को जिमाना चाहता हूँ। उसकी आर्थिक स्थिति समझकर पंचों ने उसे समझाने का प्रयास किया, परन्तु वह बिगड़ गया। उसने सोचा कि पंच लोग भी जिधर पैसा होता है उधर झुक जाते हैं। किसी को इजाजत देते हैं और किसी को मना कर देते हैं। वे तो उसके भले के लिए कह रहे थे, लेकिन

PDF Compressor Free Version

उसका तो दृष्टिकोण ही बदला हुआ था। सोच रहा था कि ये पंच उसी सेठ से मिले हुए हैं। उन पंचों की कोई मिलीभगत नहीं थी, लेकिन उसका दृष्टिकोण बन गया था कि सारे के सारे मिले हुए हैं। स्थिति देखकर पंचों ने अनुमति दे दी, कहा– कराओ भोजन। जो खिलाना था वह मंजूर हो गया। उसने भी सबको भोजन करवाया, अच्छी तरह से परोसगारी की और जब पापड़ परोसने का नंबर आया तो वही सेठ नौकर को साथ लेकर पापड़ परोसने लगा। सबको पापड़ परोसते-परोसते उसी सेठ के पास पहुँचा और सोचा इसी ने मुझे खाण्डा पापड़ परोसा था। वहाँ पहुँचकर उसने टोकरी में चूर-चूर कर पापड़ परोसा। पर उसके तो कोई फरक नहीं पड़ा था। इसे मजा ही नहीं आया। इतना पैसा बर्बाद कर दिया, व्यर्थ गया। मजा कब आता ? जब सेठ का कलेजा जलता, उस सेठ के दर्द होता तो उसको मजा आ जाता, पर सेठ का कलेजा नहीं जला तो मजा नहीं आया। इतना-सारा पैसा उसने खर्च किया था इसलिए टेढी आँख करके कहा– सेठ साहब, याद है आपने मुझे खाण्डा पापड़ परोसा था तो आज मैंने भी आपको खाण्डा पापड़ परोसा है। सेठ ने कहा– "अरे भले आदमी, इसी के लिए यह सारा रंग रचाया है क्या ? खाण्डा पापड़ का बदला लेने के लिए जमीन-जायदाद को बेचकर यह खेल किया है ? भले आदमी जरा समझ तो सही, मैंने कोई जान-बूझकर खाण्डा पापड़ नहीं परोसा था। मैंने वैसा किसी दुर्भावना से नहीं किया था जो तुमने मुझे आधा पापड़ परोसा है। पर मुझे कोई शिकायत नहीं है। आधा पापड़ भी मुँह में रखा नहीं जाता है। आधा पापड़ मुँह में रखें तो लोग कहेंगे कि पापड़ खाना जानता ही नहीं है। पापड़ तो टुकड़े करके ही मुँह में खाते हैं, लेकिन आधा पापड़ एकाएक मुँह से लगता नहीं है। भाई, तुमने उपकार किया, मुझे इतना भी परिश्रम नहीं करना पड़ा। मुझे अब पापड़ तोड़ना भी नहीं पड़ेगा। तुमने तो मेरी सुविधा कर दी है, पापड़ भी तोड़कर परोसा है।"

श्रोता बनने में बहुत आनन्द है, लेकिन उपभोक्ता बनते समय ये सारी बातें हम क्यों भूल जाते हैं ? उस समय मूँछ का बाल नीचे हो जाए, यह चिन्ता क्यों हो जाती है ? मेरी बात 21 रहनी चाहिए और उस बात

PDF Compressor Free Version

को 21 रखने के लिए हम क्या-कुछ नहीं कर गुजरते हैं ? आज के युग में इन ऊपर की सारी मूंछों का सफाया हो चुका है, लेकिन फिर भी इस मूँछ का बाल ऊँचा रखा जाए, यह चिन्ता रहती है। इस मूँछ के बाल को ऊँचा रखने के लिए समाज के भीतर कैसी-कैसी परिस्थितियाँ उत्पन्न की जाती हैं। छोटी-छोटी बातों को लेकर व्यक्तिगत बातों को लेकर, हम समाज के टुकड़े करने के लिए तत्पर हो जाते हैं। हम सोचते हैं, समाज से हमें क्या लेना-देना, हमारी बात ऊँची रहनी चाहिए, हमारी मूँछों का बाल ऊँचा रहना चाहिए। धिक्कार है ऐसी मानसिकता पर, तुम्हारी बुद्धि पर लानत है, मूँछों के बाल को देखा, समाज को नहीं देखा, राष्ट्र को नहीं देखा ? आज यह जो कुछ हो रहा है उसके दुष्परिणाम भी सामने आ रहे हैं। हमारी स्थिति गर्त में जा रही है।

बंधुओ ! पर्व पर्युषण के शुभ अवसर पर आप इस स्थिति पर गंभीरता से चिन्तन करें तथा उपभोक्ता बनने की प्रेरणा प्राप्त करें। एवन्तामुनि अतिमुक्तक कुमार गेंद खेल रहे हैं। अचानक कौन आ गये ? गणधर गौतम स्वामी, जिन्होंने भगवान महावीर को वंदना करने के बाद कहा था- इच्छामि णं भंते। तुब्भेहिं अब्भण्णुणाए समाणे भिक्खायरियाए जाव अडमाणे .....

मेरी इच्छा है, यदि आपकी आज्ञा हो जाए तो मैं भिक्षाचर्या के लिए जाऊं। आज्ञा मिल जाने पर वे भिक्षा के लिए घूमने निकलते हैं और वहाँ पहुँच जाते हैं। अतिमुक्तक कुमार जैसे ही गणधर गौतम को देखते हैं, उनके व्यक्तित्व से प्रभावित हो जाते हैं। बालक हैं, 8 वर्ष की वय है। वे गेंद को छोड़कर गौतम स्वामी के पास आते हैं और पूछते हैं- आप कौन हैं ? उत्तर मिलता है-''मैं श्रमण भगवान महावीर का शिष्य हूँ।'' बालक पुनः प्रश्न करता है-''कहाँ पधार रहे हैं ?'' भिक्षा के लिए जा रहा हूँ। बालक का आग्रह- चलिए मेरे घर, मैं आपको बहुत-सी भिक्षा दिलाऊंगा। बालक अंगुली को पकड़ लेता है और अंगुली पकड़कर चलता है।

कभी-कभी कुछ जिज्ञासाएँ हमारे मन में आ जाती हैं। जैसे शास्त्रों में मुँहपत्ती का निर्देश तो मिलता है, किन्तु डोरी का उल्लेख कहीं

PDF Compressor Free Version

पर नहीं है। यह डोरी आपने कहाँ से बांध ली ? यह भगवान की आज्ञा है, यही समझें। भगवान महावीर ने भगवती सूत्र में कहा है खुले मुँह बोलना सावद्य भाषा है। इसलिए सावद्य भाषा का प्रयोग नहीं करना है, यदि मुँहपत्ती हाथ में रखकर हम सावधानी रख सकते हैं तो कोई आवश्यकता नहीं है डोरे की, परन्तु यदि उतनी सजगता नहीं रह पाती है तो हमें तो भगवान महावीर के वचनों की पालना करनी है, खुले मुँह नहीं बोलना है, सावद्य भाषा का प्रयोग नहीं करना है, इसलिए हमने डोरे का उपयोग कर लिया है। इस प्रकार भगवान महावीर के वचनों की पालना होती है। मान लीजिए, कहीं पर कोई तेजस्वी तपस्या में रत है। उसे पानी की आवश्यकता पड़ गई है। वहाँ किसी से पानी लाने के लिए कहा। उसे बताया कि तपस्या चल रही है इसलिए मैं घर पर नहीं आ सकता। अब पानी लाने वाला क्या हाथ में पानी भरकर लाएगा ? कैसे लाएगा ? कमण्डल में ? पात्र में ? जग में या गिलास में या लोटे में या केतली में ? नहीं तो आजकल बोतल आती है मिनरल वाटर की। उस बोतल में भरकर ले आएगा। पर लाएगा तो किसी-न-किसी साधन में ही, बिना साधन तो पानी आएगा नहीं। उसके लिए कोई-न-कोई साधन चाहिए। वैसे ही भगवान महावीर ने कहा है कि वचन खुले मुँह नहीं बोलना चाहिए। खुले मुँह से बोलने वाली भाषा सावद्य होती है। हमसे इतना उपयोग नहीं हो पाता है कि मुँहपत्ती हर समय हाथ में बनाए रखें। प्रमाद हो जाता है। इसलिए हमने डोरे का उपयोग कर लिया। यों भी समझें। आप यहाँ बोलने के लिए खड़े होते हैं, हाथ में रूमाल रखकर खड़े होते हैं, पर हाथ क्या मुँह पर बराबर बना रहता है। स्पष्ट है, नहीं। इसीलिए भगवान की बात भी रह जाए, आज्ञा का पालन भी हो जाए और जीवों की विराधना भी नहीं हो, इसलिए मुँहपत्ती के साथ उस डोरे का उपयोग कर लिया गया। इस प्रकार संयम के साधन का उपयोग कर लिया। यदि संयम की रक्षा के लिए कोई उपकरण काम में लिया जाता है तो उसके लिए भगवान का कहीं कोई विरोध हो, ऐसा परिलक्षित नहीं होता।

वह अतिमुक्तक, महाराज गौतम स्वामी को अपने घर ले गए। माता श्रीदेवी ने पूछा- क्या ले आया बालूड़ा ? माता देखती है कि वह

PDF Compressor Free Version

महाराज को लेकर आया है। माता श्रीदेवी प्रसन्न हो गई कि बालूड़ा मेरे घर में गौतम स्वामी जैसे महाराज को ले आया है। माता हर्षित हुईं। बालक जो भी क्रिया करता है, काम करता है, जब वह माता उसको देखती है, उसके कार्य से माता कितनी हर्षित होती है या माता दुख व्यक्त करती है ? यदि माता हर्ष व्यक्त करे तो बालक में वैसी वृत्ति बढती चली जाती है। एक बालक पैंसिल चुराकर ले आया। माता हर्षित होती है तो बालक कभी पेन, कभी कॉपी चुराकर लाएगा। बड़ी-बड़ी डकैती डालेगा। यदि एक बालक संतों के दर्शन करता है। माता बड़ी खुश होती है तो वह संतों के दर्शन करने के लिए प्रेरित होगा। उसकी वृत्ति संत के अनुसार बन जाएगी। बालक को कैसा बनाना ? संत, श्रोता या सरोता, यह माता की बहुत बड़ी जिम्मेदारी है। आचार्य प्रवर युगद्रष्टा पुज्यश्री जवाहरलालजी म.सा. फरमाया करते थे कि माता बालक के लिए पहली गुरु होती है। धर्मगुरु और अध्ययन कराने वाले टीचर बाद में होते हैं। सबसे बड़ी गुरु माता होती है। माता श्रीदेवी ने सोचा कि इसने भला काम किया है और जब भिक्षा के बाद पूछा कि भगवन कहाँ जाओगे ? तो उत्तर मिला- मैं अपने गुरु के पास, धर्मगुरु, धर्माचार्य के पास जाने की तैयारी कर रहा हूँ। तब अतिमुक्तक कुमार ने कहा कि मैं भी आपके साथ चलना चाहता हूँ और साथ हो गया। भगवान के पास पहुँचे और पहुँचने पर अतिमुक्तक कुमार ने जब भगवान महावीर को देखा तो देखता ही रह गया। फिर भगवान महावीर की वाणी भी सुनी। वाणी-श्रवण का उस छोटे-से बालक पर ऐसा चमत्कारिक प्रभाव पड़ा जैसा बड़ों-बड़ों पर भी नहीं पड़ता है। सारी बात संस्कारों और भावना की होती है। अतिमुक्तक कुमार केवल एक वचन सुनकर सिर्फ श्रोता नहीं रहे, उपभोक्ता बन गए और माता से आकर कहने लगें कि माँ! मैं तो दीक्षा लूँगा। माँ को बालक की बात सुनकर हँसी आ गई। वह बोली - तुम अभी संयम को क्या जानो ? तुम तो यह गेंद लो और खेल खेलो। तब अतिमुक्तक कुमार ने कहा- जं चेव न जाणामि। तं चेव जाणामि, तं चेव जाणामि, जं चेव न जाणामि।

माता- यह कैसी पहेली बुझा रहे हो ? मैं ऐसी पहेली नहीं समझ रही हूँ।

PDF Compressor Free Version

अतिमुक्तक कुमार- माता यह पहेली नहीं है, बल्कि जीवन का सत्य है।

माता- बेटा, संयम का मार्ग इतना आसान नहीं है। नंगी तलवार पर चलना आसान है, पर संयम-मार्ग पर चलना दुरूह है।

कुमार ने कहा- माँ, तुम्हारी बात सत्य है, पर इससे मुझे प्रेरणा ही मिली है। कायर व्यक्ति ही ऐसी बात सुनकर कम्पायमान हो सकता है, वीर नहीं। मैंने तुम्हारा दुग्धपान किया है, किसी कायर माता का नहीं। इसलिए तुम्हारे द्वारा दर्शायी गई बात को सुनकर मेरा पौरुष मुझे उस पर अग्रसर होने को ही प्रेरित करता है।

माता- बेटा, लोहे के चने चबाने के समान यह संयम-मार्ग कठिन है। तुम्हारे दाँत मोम के समान हैं इसलिए यह मार्ग तुम्हारे योग्य नहीं है।

पुत्र- नरक गति में मेरी आत्मा ने कितनी कठोर यातनाएँ सही हैं, उससे बढकर लोहे के चने चबाना कठिन नहीं है।

बंधुओं ! माता और पुत्र का संवाद आप सुन चुके हैं और यह तो वर्तमान में सुनते रहे हैं। आज यदि कोई दीक्षार्थी दीक्षा के लिए तैयार होता है तो परिवार वाले, आज के माता-पिता समझाइश करते हुए कहते हैं- कांई पड्यो है साधुओं में, आपस में मुनियां में ही क्लेश भरा है। कोई कुछ कहता है, कोई कुछ बोलता है। लेकिन श्रीदेवी माता ने आज की माता की तरह यह नहीं कहा कि साधु बनकर क्या करेगा ? वे तो आपस में लड़ते-झगड़ते हैं। अब आप सोचिए कि क्या ऐसा कहना उचित है ? व्यक्ति व्यापार करने के लिए तैयार होता है तो कई व्यक्ति दिवालिए हो जाते हैं और कई व्यक्ति पैसे लगाकर गलत संगति या अपनी नासमझी के कारण अपनी सारी पूँजी गंवा बैठते हैं, तो क्या लोग व्यापार करना बंद कर देते हैं ? लड़कियों की शादी होती है और बड़े अच्छे-अच्छे मुहूर्त निकाले जाते हैं। फिर भी यदि कोई लड़की विधवा हो जाए तो क्या लोग यह तय कर लेते हैं कि आगे से कोई अपनी लड़की की शादी नहीं करेगा ? विचार कीजिए कि ऐसा क्यों होता है और क्या

PDF Compressor Free Version

यह उचित है ? यदि कहीं, कभी, किसी कारण से किसी अच्छे कार्य का अच्छा परिणाम नहीं निकलता है तो आप इस भय से कि अच्छा परिणाम नहीं निकलेगा, अच्छा काम करना बंद कर देते हैं ? फिर पता नहीं क्यों, दीक्षा लेने की आज्ञा मांगते हैं तो कहते हैं- कांई पड्यो है दीक्षा में। क्या आपको अपने जिगर के टुकड़े पर विश्वास नहीं है ? क्या आपका जिगर का टुकड़ा भी दिवाला निकालेगा ? आप अपने जिगर के टुकड़े पर विश्वास कीजिए। आप उसको संयम-मार्ग की तकलीफें बता सकते हैं, संयम-जीवन कठिन है, संयम-जीवन पर चलना लोहे के चने चबाने जैसा है - यह भी कह सकते हैं, पर जो संयम-जीवन पर चढ जाता है वह प्रेम रस को प्राप्त कर लेता है। नहीं चलता है तो जिन्दगी क्या रह जाती है, ऐसी बातें भी समझाइए ? पर ये बातें आप स्वयं समझें तभी समझा सकते हैं। आज स्थिति यह है कि हम राजनीति और दूसरी तरह की बातें खूब जानते हैं, तेरी-मेरी भी जानते हैं। लेकिन धर्म की, ज्ञान की, दर्शन की बातें नहीं जानते हैं। बंधुओं, अपनी प्रवृत्ति को बदलिए, अपने धर्म की स्थापना और धर्म के विरोध का प्रतिकार आप तब ही कर पाएँगे जब आप अपने धर्म की बात गहराई से जानते होंगे। यदि अपनी एक संतान को आप धर्म-मार्ग में लगाते हैं तो आप कितना पुण्य कमाते हैं, आप नहीं, आपके परिवार के कितने सदस्य धर्म के सम्मुख हो जाते हैं।

बंधुओं ! चिन्तन करने की आवश्यकता है, यदि आपके सामने धर्म के लिए चुनौती आ जाए तो ऐसे समय में हमें कपड़े फाड़ने की आवश्यकता नहीं है। उस चुनौती को झेलने का प्रयत्न कीजिए, किन्तु उसके लिए शास्त्रों का गंभीर ज्ञान होना आवश्यक है। बिना शास्त्रों के स्वाध्याय की आप चुनौती नहीं झेल सकते। यदि आपके पास शास्त्रों का ज्ञान नहीं है तो आप चुनौती का जवाब कैसे देंगे ? अतः जो शास्त्रों के अच्छे मर्मज्ञ हों, ऐसे श्रावकों की, ऐसे विद्वानों की आज बड़ी आवश्यकता है।

आज हमारे समाज में लड़ाई-झगड़े हो रहे हैं। परिणामस्वरूप हमारी शक्ति समाज के लड़ाई-झगड़ों में लग रही है। वह शक्ति हमको शास्त्रवाचन में लगानी चाहिए। उस शक्ति का यही सदुपयोग है। माता श्रीदेवी ने देख लिया कि अतिमुक्तक कुमार को धर्म का रंग ऐसा लग

PDF Compressor Free Version

गया है कि अब इसके ऊपर संसार का रंग चढ नहीं पाएगा। इसने एक व्याख्यान में तत्त्वज्ञान प्राप्त कर लिया है।

अतः माता श्रीदेवी उन्हें भगवान महावीर के पास ले गईं और दीक्षा दिलवा दी। दीक्षित होकर ऐवंतामुनि ने क्या किया ? नाव तिराई। हाँ, पूज्य गुरुदेव इस दिन फरमाया करते थे-

ऐवंता मुनिवर नाव तिराई बहता नीर में
पोलाशपुरी नगरी का राजा विजयसेन भोपाल
श्रीदेवी अंग उपन्यासरे ऐवन्ताकुमार जी।

ऐवन्ताकुमार बहते पानी में छोटी पातरी डालकर कहने लगे- "नाव तिरे मेरी नाव तिरे।" उनके ऐसे कृत्य पर संतों के मन में विचार भी पैदा हुआ। पर भगवान के समाधान से वे सावधान हो गए। हकीकत में ऐवन्ताकुमार चरमशरीरी थे। उस घटना से उनका अन्तर जाग्रत हो गया। इसलिए हमको भी ऐवंतामुनि का अनुसरण करना है। यदि हम वैसा करेंगे, अपने दर्पण में अपनी छवि को देखकर नाव को तिराने की तैयारी करेंगे तो वस्तुतः हम अपनी जिन्दगी को सफल कर पाएँगे अन्यथा स्थिति वैसी की वैसी ही रहेगी। इसलिए हम चिन्तन करें, मनन करें और केवल श्रोता नहीं बनें, हम केवल परीक्षा देने के लिए परीक्षार्थी नहीं बनें, हम उपभोक्ता भी बनें। ऐवन्ताकुमार मुनि की तरह सच्चे मायने में उपभोक्ता बनें, जिन्होंने सिद्ध स्वरूप को प्राप्त कर लिया था। हम भी वैसे ही 'श्रेष्ठ श्रोता बने उपभोक्ता' की उक्ति को चरितार्थ करें। उस प्रकार से वीतराग वाणी को अपने कण्ठ में उतार कर यदि जीवन में अमृत को ग्रहण करेंगे, तो हमारा जीवन भी मंगलमय बनेगा।

01.09.2000

❖ ❖ ❖

PDF Compressor Free Version

8. खामेमि सव्वे जीवा.....

परमात्मा के चरणों में कवि ने एक विनती रखी है- "प्रभु मेरा हृदय गुण-सिन्धु हो जाए, मेरा यह हृदय गुण-सिन्धु बन जाए। ढूंढने पर भी इसमें ईर्ष्या का कोई क्षुद्र परमाणु भी प्राप्त नहीं हो।" दूसरे की बढ़ती को देखकर मन अवसाद को भी प्राप्त होता है, किन्तु कवि ने भावना व्यक्त की कि भगवान मेरे हृदय में अवसाद की भावना नहीं जगे, बल्कि प्राणीमात्र को विकास-क्रम में, उन्नत अवस्था में देखकर मेरा हृदय हर्ष से गद्‌गद् हो जाए, हर्ष से सराबोर हो जाए।

बन्धुओं ! आज संवत्सरी पर्व है। विभिन्न वक्ताओं के माध्यम से आपने संवत्सरी पर्व की महिमा सुनी है, विभिन्न तौर-तरीकों से आपके समक्ष अनेक प्रकार की बातें आई हैं। जरा हम विचार करें कि संवत्सरी पर्व की आराधना कैसे की जाए ? हम पर्व मनाने की तैयारी कर रहे हैं, लकीर के फकीर बनकर चल रहे हैं या यथार्थ में हम पर्व से कुछ प्राप्त करना चाहते हैं ? हम यथार्थ में पर्व की आराधना करना चाहते हैं या यह सोचकर कि यह जैनियों का एकमात्र पर्व है इसलिए हम जैनियों को धर्मस्थान में पहुँचना चाहिए, संतों के दर्शन करने चाहिए और एक-दूसरे को खमाऊँसा-खमाऊँसा कहना चाहिए ? यदि केवल इतना-सा ही संवत्सरी पर्व को हमने मान लिया है तो यह हमारी बहुत बड़ी भूल है। संवत्सरी पर्व केवल हम ही नहीं मना रहे हैं, इसकी आराधना तीर्थंकर देव, गणधर देव और पूर्व के आचार्य भी करते रहे हैं। वे भी इसकी आराधना करते रहे हैं और उन्हीं की परम्परा के अनुसार आज हम भी संवत्सरी पर्व की आराधना करने के लिए उद्यत हुए हैं।

बन्धुओं ! संवत्सरी पर्व कोई खाने-पीने का, मौज-शौक का पर्व नहीं है, इसके माहात्म्य को ध्यान में लाने की आवश्यकता है। आपने सुना होगा, कुछ वर्षों पहले ब्राजील में एक सम्मेलन हुआ था और उस

PDF Compressor Free Version

सम्मेलन में प्रदूषण की समस्या पर काफी चिन्ता व्यक्त की गई थी। वह चिन्ता प्रमुख रूप से शोर-प्रदूषण को लेकर थी। कहा जा रहा था कि शोर का प्रदूषण आज इतना भयंकर रूप ले चुका है कि आने वाले समय में मनुष्यों का जीवन खतरे में पड़ जाने की संभावना है। वहाँ अन्तरराष्ट्रीय जगत् के बड़े-बड़े विद्वान, बड़े-बड़े अर्थशास्त्री, समाजशास्त्री एकत्र थे। उनका चिन्तन बना था कि यदि शोर-प्रदूषण समाप्त करना है तो वायु-प्रदूषण को भी समाप्त करना होगा और यदि हम चाहते हैं कि वायु-प्रदूषण समाप्त हो तो उनकी मान्यता रही थी कि वनस्पति का संरक्षण करना होगा। इस स्थिति पर विचार कीजिए कि हम कहाँ जा रहे हैं और वैज्ञानिक कहाँ लौट रहे हैं ?

प्रभु महावीर ने ढाई हजार वर्ष पहले वनस्पति की सुरक्षा की और अप्काय की सुरक्षा की बात कही थी, किन्तु मनुष्य नहीं समझ पाया। वह वनस्पति को लगातार नष्ट करता रहा। जंगल के जंगल नष्ट कर दिए और जब जंगल समाप्त हो गए, तब उसे एहसास हुआ कि जंगल काटकर उसने मानव-समाज के अस्तित्व के लिए बहुत बड़ा खतरा पैदा कर दिया है। परिणामस्वरूप आज पुनः वृक्षारोपण की बात चल रही है, क्योंकि वनस्पति यदि सुरक्षित रहे तो ही वायु-प्रदूषण कम हो पाएगा।

शोर-प्रदूषण की समस्या पर भी गहरा चिन्तन होने लगा है। सुप्रीम कोर्ट के दो न्यायाधीशों की बैंच की यह बात आप लोगों के सामने आ चुकी है कि धर्मक्षेत्र में आराधना, उपासना और प्रार्थना के लिए माइक का उपयोग करना मौलिक अधिकार नहीं है। किसी संस्था के द्वारा हाईकोर्ट में रिट याचिका दायर करने पर हाईकोर्ट ने यह इजाजत दे दी थी कि धीमे स्वर में माइक का उपयोग प्रार्थना के लिए किया जा सकता है, किन्तु सुप्रीम कोर्ट में उसके संबंध में जो याचिका दायर की गई उसमें सुप्रीम कोर्ट ने निर्णय दिया कि नहीं, मंद ध्वनि से भी प्रार्थना सभाओं में माइक का उपयोग नहीं होना चाहिए। माइक का उपयोग शान्ति को भंग करने वाला होता है, बहुत-से व्यक्तियों की नींद में दखल करने वाला होता है, विद्यार्थियों के अध्ययन में खलल डालने वाला होता है। वकीलों ने जब यह तर्क प्रस्तुत किया कि प्रार्थना करने में बुलंद आवाज की